चन्दामामा
दिसम्बर १९७४
1
Re

Photo by: S. B. TAKALKAR

PLAY WITH DOGS
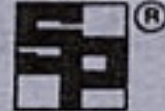
मैं गंदे पैरों से भला प्लूटो को अन्दर कैसे लाता?

चन्दामामा
संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'
'पैसे का मालिक' वाली बेताल कथा की नीति को अनेक लोगों ने जान लिया, मगर वह पुरानी नीति है। 'अमरवाणी' शीर्षक के अन्तर्गत पाठकों ने इस नीति वाले श्लोक को पढ़ लिया है। फिर भी यह नीति सब को याद रखने योग्य है।
'सुमंत की युक्ति' नामक कहानी के द्वारा यह विदित होता है कि अंध विश्वास समाज पर कैसे शासन करते हैं। लेकिन आधुनिक युग में ऐसे अंध विश्वासों का जनता पर शासन करना सर्वथा अनुचित है।
वर्ष : २७ दिसम्बर १९७४ अंक : ६
A CHANDAMAMA PUBLICATION

मित्र-भेद

[१७]

सियार ने सिंह के पास जाकर कहा—

"महाराज, हमने सारे जंगल को छान डाला। इतने थक गये हैं कि हम से अब एक क़दम भी आगे बढ़ाया नहीं जाता। आप को खाने की सख्त जरूरत है, अगर आप मान ले तो विकट का वध करके बढ़िया मांस पाया जा सकता है।"

ये बातें सुन सिंह क्रोध में आया, गरजकर बोला—"अरे कमबख्त? फिर कभी तुमने ऐसी बेहूदी बातें अपने मुंह से निकालीं तो उसी क्षण तुम को मार डालूंगा। मैंने विकट को अभयदान प्रदान किया है, ऐसी हालत में मैं उसका कैसे वध कर सकता हूं? कहा जाता है कि अभयदान गोदान, भूदान तथा अन्नदान से भी उत्कृष्ट है!"

"अभय देनेवाले आप ही यदि ऊँट का वध करे तो वह पाप होगा। मगर यदि वही खुद आप के पैरों पर गिरकर अपना वध करने की प्रार्थना करे तो आप उसे मार सकते हैं। यदि आप इसके लिए भी तैयार नहीं होते तो हम तीनों में से किसी को खा डालिए। क्योंकि आप खाये बिना नहीं रह सकते। अगर आप भूख के मारे मर जाते हैं तो हम सब को भी आप की चिता पर जलकर मर जाना होगा।" सियार ने समझाया।

"अच्छी बात है, जैसी आप की इच्छा!" सिंह ने लाचार होकर कहा।

इसके बाद सियार बाक़ी तीनों जानवरों के पास आया और बोला—"ऐसा मालूम होता है, हमारे राजा अब भूख के मारे

अंतिम पृष्ठ का चित्र

अपने प्राण छोड़ने वाले हैं। वे भूख से न मरे, इसके लिए हम सब को अपने शरीर उन्हें अर्पित करना होगा।"

तब चारों जानवर सिंह के पास पहुँचे। प्रणाम करके आँसू बहाते खड़े रह गये।

अपने पास फिर से लौट आये हुए सेवकों को देख सिंह ने पूछा—"हमारे खाने के लिए कोई जानवर मिल गया है?"

"महाराज! हमने सारे जंगल को छान डाला, पर कहीं कोई जानवर हाथ न लगा। इसलिए आप मुझ पर अनुग्रह करके मुझ को अपना आहार बना ले और जपने प्राणों की रक्षा करे। इससे मुझे इह और पर लोक की प्राप्ति होगी!" कौए ने कहा।

यह बात सुनकर सियार ने कहा—"तुम तो बहुत ही छोटे प्राणी हो! तुम को खाने पर मालिक के प्राणों का बचना असंभव है। उलटे शास्त्र कहते हैं कि तुम को खाने से पाप लगता है। सुनते हैं कि कौए तथा कुत्ते के माँस के खाने पर तबीयत खराब होती है। लेकिन तुम्हारी प्रभुभक्ति प्रशंसनीय है। तुम्हारा यश तीनों लोकों में फैल जाएगा। इसलिए तुम हट जाओ, मुझे भी अपने प्रभु से निवेदन करना है।" इसके बाद उसने सिंह से निवेदन किया कि उसे खाकर वह अपने प्राणों की रक्षा करे।

सियार के मुंह से ये शब्द सुनकर चीते ने भी अपनी चालाकी का परिचय देते हुए कहा—"अबे सियार! तुमने क्या खूब कहा? तुम भी तो छोटे प्राणी हो! अलावा इसके तुम भी नाखून रखने वाले जानवर हो, इसलिए तुम भी सिंह की जाति के लगते हो, इस वजह से सिंह तुम को नहीं खा सकता।" यों उसे समझाकर सिंह से निवेदन किया—"महाराज, आप अपने प्राणों को बचाने के लिए मुझे खाकर इस लोक में शाश्वत यश और परलोक में शाश्वत सुख मुझे प्रदान कीजिए।"

अन्य जानवरों की बातें सुनकर ऊँट ने सोचा—'इन तीनों ने बड़ी उदारता की

बातें कीं, मगर सिंह ने इनमें से किसी को भी नहीं खाया। इसलिए मैं भी उनसे निवेदन करूँगा कि मुझे खा डाले। ये तीनों मेरे प्राण बचाने का कोई न कोई उपाय करेंगे।"

यों सोचकर ऊँट ने कहा—"भाई चीता! तुम ने खूब कहा, लेकिन तुम भी तो नाखून रखने वाले जानवर हो! ऐसी हालत में हमारे मालिक तुम को भी कैसे खा सकते हैं? तुम हट जाओ! मुझे भी अपने प्रभु से निवेदन करना है!" इन शब्दों के साथ ऊँट सिंह के आगे आया, उसको प्रणाम करके बोला—"महाराज, ये तीनों आप के खाने के उपयुक्त नहीं हैं। इसलिए आप मुझे खाकर अपने मूल्यवान प्राणों की रक्षा कीजिए। कहते हैं कि अपने मालिक के वास्ते प्राण अर्पित करने वालों को स्वर्ग का जो सुख प्राप्त होता है, वह यज्ञ और यागों के द्वारा भी उपलब्ध नहीं होता।"

ऊँट के मुँह से ये शब्द सुनते ही सिंह ने इशारा किया, तुरंत सियार और चीते ने उस पर हमला करके मार डाला। उस ऊँट को खाकर सिंह तथा उसके तीन सेवकों ने अपने प्राणों को बचाया।

संजीवक ने दमनक को यह कहानी सुनाकर कहा—"भाई, मुझे लगता है कि किसी दुष्ट व्यक्ति ने मेरी शिकायत करके पिंगलक के मन को तोड़ दिया है। अच्छे मंत्रियों वाले बुरे राजा की अपेक्षा बुरे मंत्रियों वाले अच्छे राजा की हालत खराब होती है। गीध मंत्रियों वाले हंस की अपेक्षा, हंसों के मंत्री वाले गीध की हालत अच्छी होती है। किसी बदमाश ने मेरे तथा पिंगलक के बीच वैमनस्य पैदा किया है। अब मेरे सामने यही समस्या है कि मैं क्या करूँ? लड़ने के सिवाय मुझे कोई दूसरा मार्ग दिखाई नहीं देता। शांति की बातें, उपहार और षड़यंत्र अब काम नहीं देंगे। साम, दान व भेदों के द्वारा कोई प्रयोजन नहीं है, इसलिए लड़ना जरूरी है। यदि उस लड़ाई में हार गया तो स्वर्ग में जाऊँगा, जीत गया तो आराम से जीऊँगा।"

विचित्र जुड़वाँ

[५]

[महाराज दानशील ने अपनी तीनों पुत्रियों को तीन वर्ष तक भूगर्भ-गृह में गुप्त रूप से रखकर उनकी रक्षा की। अब केवल चौबीस घंटों में ख़तरा टल सकता था, तभी जल्दबाजी में आकर राजा अपनी पुत्रियों को भूगर्भ गृह से बाहर लाया। तुरंत तीन गीध आकर उनको उठा ले गये। राजा और रानी दुख में डूब गये। बाद–]

राजा दानशील थोड़ी देर में अपने दुख पर ज़ब्त कर सका, मगर रानी यह कठोर समाचार सुनकर असहनीय दुख से भर उठी। राजा को इस बात का डर लगा कि बच्चियों के साथ शायद रानी भी उसके हाथ से निकल जाए।

राजा यह सोचते अपना सर पीटने लगे–"मैंने तीन साल तक हठ करके बच्चियों को भूगर्भ गृह में रखा, आज एक दिन भी जैसे तैसे बच्चों को समझा देता तो इस खतरे से मुक्त होता। मैं पापी हूँ, सहनशीलता न रखने की वजह से देखते-देखते मैंने अपनी लाड़ली पुत्रियों को गीधों के हाथ सौंप दिया। क्या अब मेरी रानी भी मेरे हाथों से निकल जाएगी?" वहाँ पर सब के चेहरे सफ़ेद पड़ गये थे, कई घंटे बीत गये, फिर भी रानी होश में न आई, तब सब यह

"मेरी बात पर यक़ीन करो। क्या अब भी मैं तुम से कुछ छिपा रखूंगा? मेरी बातों पर यक़ीन करो। मैंने लड़कियों को कहीं नहीं छिपाया है। गीध उठा ले गये हैं। मेरी बातों पर विश्वास न हो तो उन सेवकों से पूछ लो!" राजा ने दीन होकर कहा।

रानी को जो भी समझावे, वह समझने की स्थिति में न थी–"तुम सब मिले हुए हो। मुझ से सच्ची बात नहीं बता रहे हो। मैं अपनी बेटियों को देखे बिना ज़िंदा नहीं रह सकती, तुम लोगों से मेरा क्या मतलब है? मैं अपनी बेटियों को ख़ुद ढूंढ कर ले जाऊँगी! मुझे यहाँ से जाने दो!" इन शब्दों के साथ वह उठकर जाने को हुई।

रानी की यह हालत देख राजा का दिल बैठ गया। उसने दरबारी वैद्य की आँखों में इस तरह देखा जिसका मतलब था कि क्या आप रानी के मन का इलाज नहीं कर सकते? वरना मैं तबाह हो जाऊँगा।

दरबारी वैद्य ने सोच-समझ कर रानी को एक औषध दिया। उस औषध का सेवन करने के बाद रानी ने बोलना बंद किया और एक पत्थर की प्रतिमा जैसी मौन रह गई। इसे देख सब लोग फिर चिंता में डूब गये।

सोच कर निराश हो गये कि रानी के बचने के लक्षण नहीं हैं।

थोड़ी देर बाद वहाँ पर दरबारी वैद्य आ पहुँचा। उसने तरह-तरह की औषधियाँ दीं और आख़िर रानी को होश में लाया। फिर से सब के चेहरों पर पल भर के लिए ख़ुशी की लहरियाँ दौड़ गईं। मगर वह ख़ुशी क्षणिक थी, क्योंकि रानी होश में तो आ गई, मगर इस बार उसके मन पर जो धक्का लगा, उससे उसका मन बिलकुल विचलित हो उठा। वह पागल की तरह चिल्लाने लगी–"कहाँ हैं मेरी प्यारी बेटियाँ? बताओ, तुम लोगों ने उनको कहाँ पर छिपाया है?"

इसके बाद वैद्य ने राजा को अलग ले जाकर समझाया–"महाराज! अब रानी के कोई शारीरिक पीड़ा नहीं है, उसकी बीमारी मानसिक है। उस बीमारी को दूर वरने का एक मात्र उपाय है कि राजकुमारियों को ढूँढ़ लाकर उनकी आँखों के सामने रखने का। हम यह काम जितनी जल्दी कर सके, उतनी जल्दी रानी का मन स्वस्थ हो जाएगा। इसलिए अब हमें अन्य चिंताओं को भूलकर किसी भी तरह राजकुमारियों को ढूंढ़ लाना चाहिए और रानी के सामने उन्हें हाज़िर रखना होगा। अन्यथा रानी के बचने के लक्षण दिखाई नही देते। आप इस कार्य में जो भी प्रयत्न कर सकते हैं, कीजिए! रानी के स्वास्थ्य की बात मैं देख लूंगा।"

"अच्छी बात है! ऐसा ही करेंगे। मैं अभी ढिंढोरा पिटवा देता हूँ। शायद इस बार हमारा प्रयत्न सफल हो। आप रानी के स्वास्थ्य का ख्याल रखिए।" राजा ने वैद्य से कहा।

इस निर्णय के अनुसार राजा ने एक बार और अपने सभी सैनिकों को देश के कोने-कोने में भेज दिया। यहाँ तक ढिंढोरा पिटवाया कि जो युवक राजकुमारियों का पता लगाएगा, उसे अपना राज्य ही दिया जाएगा।

* * *
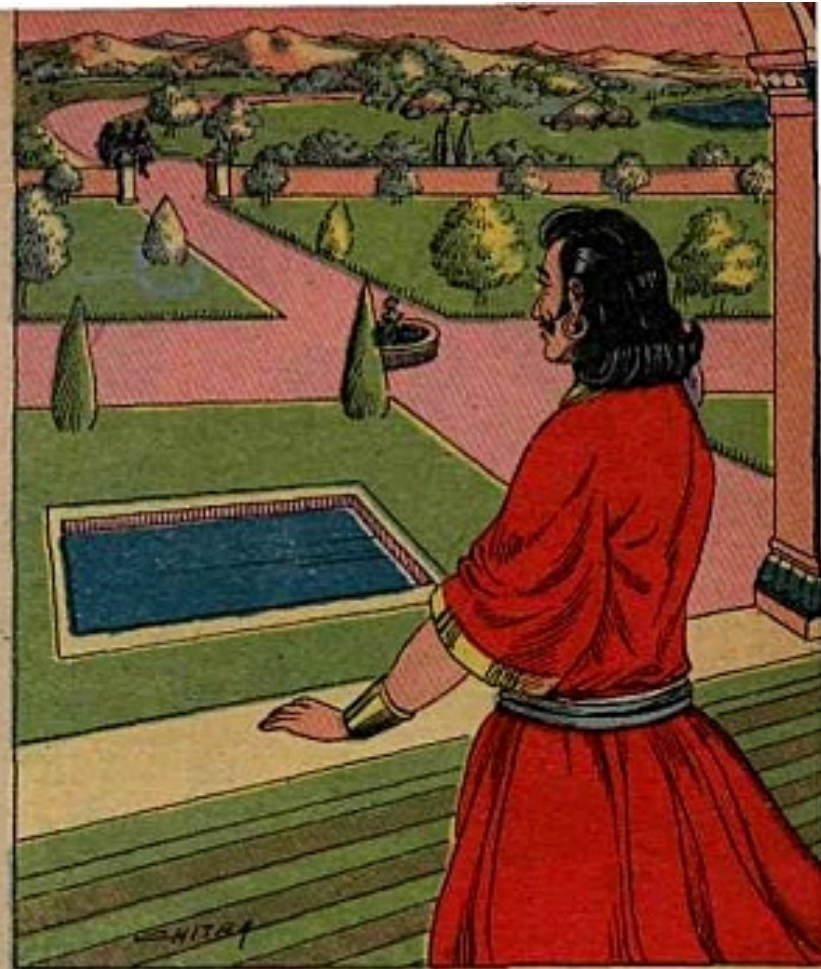
सप्ताह और महीने बीत गये, पर राजकुमारियों को ढूंढ़ने गये हुए लोगों में से एक भी व्यक्ति लौटकर नहीं आया। ढिंढ़ोरा सुनकर एक भी समर्थ व्यक्ति आगे न आया। इन घटनाओं को देखने पर ऐसा मालूम होता था कि राजा का दिमाग ही खराब हो जाएगा। उधर रानी की हालत में भी कोई परिवर्तन दिखाई न दिया।

एक दिन प्रातःकाल राजा अपने महल की तीसरी मंजिल पर टहल रहा था। उस धुंधली रोशनी में दूर पर तीन आकृतियाँ महल की ओर बढ़ते दिखाई दीं। वे तीनों समान क़द के और देखने में

आशा एवं निराशा के भावों से पल-पल राजा के चेहरे में बदलनेवाले भावों को देखते उन तीनों बालकों में से एक चकित हो राजा की ओर ताकने लगा। आखिर राजा से रहा न गया, उसने पूछा–"बेटे, तुम लोग कौन हो? कहाँ के निवासी हो? यहाँ क्यों आये हो?" यों प्रश्नों की झड़ी लगाई।

वे बालक यह समझ न पाये कि उनसे प्रश्न पूछने वाला व्यक्ति राजा होगा। क्योंकि उसके शरीर पर राजसी पोशाकें न थीं, उल्टे उसके चेहरे पर राजोचित चमक-दमक भी न थी। वैसे वह राजा

ऐसे लगते थे कि एक ही ढाँचे में ढाले गये हो।

राजा ने सोचा कि वे ज़रूर उनकी पुत्रियाँ ही होंगी, इस आशा से वह जल्दी जल्दी महल से उतर पड़ा और उनकी ओर दौड़ा। निकट पहुँचने पर पता चला कि वे तीनों लड़कियाँ नहीं बल्कि युवक हैं। फिर भी उन तीनों में समानता देख राजा के मन में एक प्रकार का विचित्र संदेह पैदा हुआ।

"कहीं मेरी पुत्रियाँ उन दुष्ट ग्रहों के माया जाल के कारण इस तरह बालकों के रूप में तो बदल नहीं गयी हैं?" यों सोचकर राजा उनकी ओर ध्यान से देखने लगा।

ज़रूर था, पर उस समय वह एक साधारण मानव जैसा लगता था। चाहे जो हो, उन्हें तो प्रश्नों का जवाब देना था, इसलिए लड़के बोले–"यहाँ से दक्षिणी दिशा में स्थित भद्रपुरी के हम निवासी हैं। आपके देश के राजा का ढिंढोरा सुनकर हम यहाँ पर चले आये हैं। हम इस देश के राजा की सहायता करने आये हैं; हमें तुरंत उन से मिलना है।"

"ओह, ऐसी बात है! तब तो चलो। मेरा भी वहाँ पर काम है। मैं तुम लोगों को राजा के पास ले जाता हूँ।" इन शब्दों के साथ राजा उन बालकों को साथ लेकर राजमहल में पहुँचा।

इसके बाद उन तीनों बालकों को राजा ने कुर्सियों पर बिठाया और वह स्वयं सिंहासन पर बैठकर बोला—"लड़के, तुम लोगों ने राजा से कोई काम बताया न?" यों कहते राजा ने बग़ल में से किरीट निकालकर अपने सिर पर धारण कर लिया।

इसे देख लड़कों में से एक बोला—"उफ़! आप ही राजा हैं!" यों आश्चर्य में आकर झट उसने मस्तक झुकाकर राजा को प्रणाम किया। फिर क्या था, झट बाक़ी दोनों ने भी उठकर राजा को प्रणाम किया।

"हाँ, बेटे! तुम जिस अभागे राजा को देखने आये हो, वह मैं ही हूँ! तुम लोग मुझ को पहचान न पाये, इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है। मेरी हालत ही कुछ ऐसी है? हां, तुम लोग अपना परिचय तो दो।" राजा ने पूछा।

राजा के सवाल का जवाब उनमें से एक ने यों दिया—"महाराज! हम भद्रपुरी की निवासिनी एक गरीब औरत के पुत्र हैं। मेरा नाम प्रकाश है, इसका नाम अंधकार और तीसरे का नाम संध्या है!" यों पहले ने अपनी उंगली से बाक़ी दोनों की ओर इशारा किया।

राजा को आश्चर्य के साथ हंसी भी आ गई। उसने पूछा—"क्या कहा? तुम लोगों के नाम संध्या, अंधकार और प्रकाश हैं? यह तो बड़ा विचित्र मालूम होता है!

ये नाम रखने के पीछे कोई कारण भी है क्या?"

इसके उत्तर में प्रकाश ने यों कहा— "महाराज! हम तीनों हमारी माता के गर्भ से एक ही दिन थोड़े घंटों के अंतर से पैदा हुए हैं। यह संध्या के समय पैदा हुआ, दूसरा अर्द्ध रात्रि के समय पैदा हुआ और इसके बाद में सूर्योदय के समय पैदा हुआ। हम तीनों की रूप-रेखाएँ एक ही प्रकार की थीं। इसलिए सुना है कि हमारी माता ने सोचा कि हमारे कौन-से नाम रखना उचित होगा? आखिर हमारे पैदा होनेवाले समय के अनुकूल हमारे नाम संध्या, अंधकार और प्रकाश रखे हैं।"
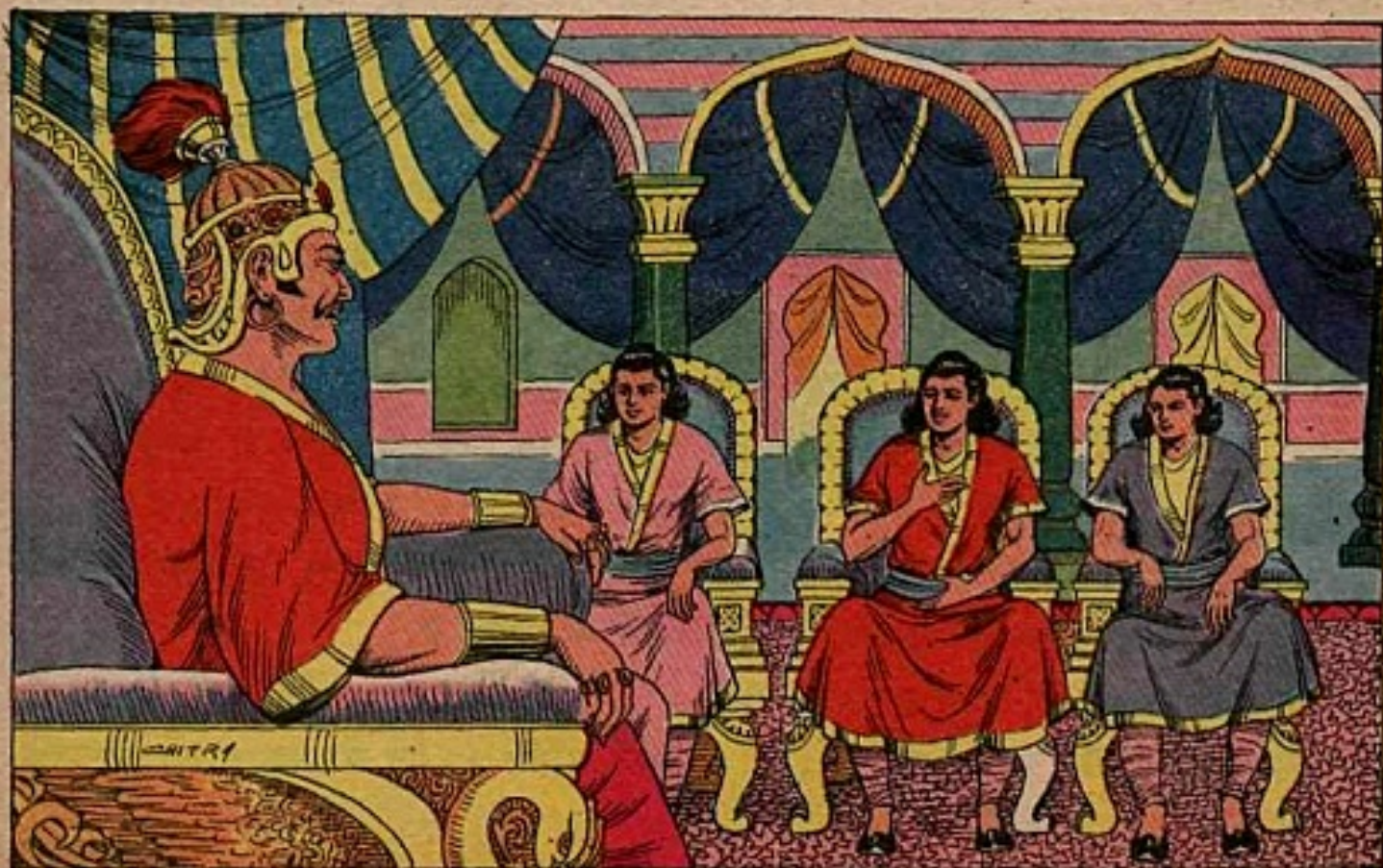
"वाह! बहुत ही अच्छा है! तो इसका मतलब है कि तुम तीनों जुड़वें हो। कैसे आश्चर्य की बात है! मेरी पुत्रियाँ भी जुड़वीं हैं। जुड़वीं कुमारियों की खोज़ करने जुड़वें लड़कों का आना देवताओं का पूर्व निर्णय प्रतीत होता है!" यों राजा ने उन लड़कों को अपने निकट बिठाया, तब पूछा—"तुम लोगों का इस प्रकार घर से निकलना तुम्हारी माँ को पता है क्या?"

इस सवाल का जवाब प्रकाश ने यों दिया—"क्यों नहीं? हम अपनी माता की अनुमति लिये बिना कोई काम नहीं करते! उनकी अनुमति लेकर ही हम घर से निकल पड़े हैं। आप पूछ सकते हैं कि घर पर एक वृद्ध माता को छोड़ तीनों चले आयेंगे तो उनका क्या होगा। इसका एक कारण है। हमारे जन्म के समय का क्या दोष है, हम नहीं जानते! संध्या के वक़्त जो भाई पैदा हुआ, वह ज्यादा प्रकाश और अंधकार को देख नहीं सकता। सूर्यास्त से लेकर लगभग पूरा अंधकार के फैलने तक वह निर्भयता के साथ संचार कर सकता है। उसकी दृष्टि तब तक ही काम देगी, इसके पहले या बाद भी वह अंधे के समान है।

"अब अंधकार नाम वाले भाई की बात सुनिए। यह तो प्रकाश को बिलकुल

सहन नहीं कर सकता। इसलिए अंधकार से भरी रात्रियाँ इसके लिए अनुकूल होती हैं। अब रही मेरी बात! मुझे तो पूर्ण प्रकाश चाहिए! सूर्योदय होने पर ही मैं बाहर आ सकता हूँ, पुनः सूर्यास्त तक मुझे घर लौटना होता है! हमारे इन विचित्र स्वभावों को आधार बनाकर ही हम तीनों अब यहाँ पर आने का साहस कर सके! हम जानते हैं कि राजकुमारियों को ढूंढ लाना वैसे कोई सरल कार्य नहीं है। हम यह भी जानते हैं कि इस कार्य को साधना हम में से किसी एक के द्वारा संभव नहीं है। लेकिन दिन के चौबीसों घंटों में–तीनों यामों में–हम तीनों कोई भी काम करने की सामर्थ्य रखते हैं, इसी कारण से हम राजकुमारियों की खोज के काम में भाग लेने जा रहे हैं। तीनों कष्ट उठाकर प्रति दिन एक एक याम में एक एक अपने अपने काम करते जायेंगे तो हमारे लिए असंभव कार्य कोई न होगा। हम कोई भी कार्य अवश्य संभव बनाकर लौट सकते हैं। इसी वजह से हमारी माताजी को अकेली छोड़, तीनों मिलकर चले आये हैं।"

इस पर राजा ने कहा–"तुम ने जो कहा, ठीक कहा। तुम्हारी माता के बारे में तुम लोगों को किसी भी प्रकार की चिंता करने की जरूरत नहीं। मैं अभी उनको बुलवा लेता हूँ। हमारे साथ वह भी राजमहल में रहेंगी।"

"महाराज! हमारे लिए और चाहिए ही क्या?" तीनों ने एक स्वर में कहा। राजा ने उसी वक़्त अपने सेवकों को भद्रपुरी भेजकर उन लड़कों की माता को बुला भेजा। राजा की इस उदारता पर वह औरत भी बड़ी ख़ुश हुई।

राजा ने उस बूढ़ी से कहा—"माई, लड़कों के द्वारा मैंने तुम्हारे परिवार की सारी कहानी जान ली। ऐसे साहसी जुड़वें बच्चों को जन्म देने वाली तुम धन्य हो!"

इसके बाद राजा ने उस वृद्धा की अनुमति लेकर लड़कों के नामों में थोड़ा परिवर्तन किया—संध्या कुमार, निशीथ और उदयन। लड़के तथा उसकी माता भी इस परिवर्तन पर बहुत प्रसन्न हुए।

दूसरे दिन लड़कों को उत्तम क़िस्म की तलवार व भाले देकर उन्हें एक-एक घोड़ा देने के लिए राजा उन्हें घुड़साल में ले गया।

उन लड़कों के नामों के अनुरूप राजा ने उदयन को सूर्यकांति जैसे चमकने वाले सफ़ेद अश्व को दिया। निशीथ को चमकने वाले श्याम वर्ण का घोड़ा तथा संध्या कुमार को लाल रंग का घोड़ा दिया।

एक अच्छे मुहूर्त पर सफ़ेद घोड़े पर उदयन, श्याम वर्ण के घोड़े पर निशीथ तथा लाल रंग के घोड़े पर संध्या कुमार—सुहासिनी, सुभाषिणी तथा सुकेशिनी की खोज़ में चल पड़े।

उनके रवाना होने के पहले राजा ने तीन काले झंड़े लाकर तीनों घोड़ों के अग्र भाग में बाँध दिया, तब सचेत किया—"तुम लोग जिस वक़्त मेरी प्यारी पुत्रियों को लेकर लौट आओगे, उसी क्षण इन्हें निकाल कर फेंक दो, भूलो मत!"

इसके बाद राजा तथा लड़कों की माता ने उन्हें हृदयपूर्वक आशीर्वाद दिया, तब तीनों वायुवेग से निकल पड़े।

(और है)

पैसे का मालिक

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब पेड़ में स्थित बेताल ने कहा—"राजन्, तुम्हारी मेहनत पर प्रसन्न हो यदि कोई तुम को वरदान देने का आश्वासन दे तो उनसे किसी भी हालत में बेमतलब के वर न माँगो। ऐसा करोगे तो तुम भी वसुगुप्त जैसे नुक़सान उठाओगे। श्रम को भुलाने के लिए तुम्हें वसुगुप्त की कहानी सुनाता हूँ, सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: उद्दानपुर में वसुगुप्त नामक एक करोड़ पति था। उसके घर में अनेक तिजोरियाँ थीं। वे सब सोने व चाँदी से भरी थीं। लोग उसके बारे में कहा करते थे कि वसुगुप्त ने लक्ष्मी देवी को अपने घर क़ैद कर रखा है। वसुगुप्त का पुत्र भी युक्त वयस्क

बेताल कथाएं

हो गया था और वह भी अपने पिता के व्यापार में हाथ बँटाता था।

वसुगुप्त सिवाय धन कमाने के और कोई आशय अपने मन में नहीं रखता था। एक कौड़ी भी बेकार खर्च करना उसको कदापि पसंद न था। हर बात में किफ़ायत को वह अत्यंत पवित्र मानता था। वसुगुप्त के परिवार में उसके अलावा उसकी पत्नी, पुत्र और पतोहू–कुल चार प्राणी थे। मगर वे बिलकुल साधारण भोजन करते थे। खाने के मामलों में भी वसुगुप्त जहाँ तक हो सके, किफ़ायत रखता था। ठाठ से खाना उसे बिलकुल पसंद न था।

उन्हीं दिनों में वसुगुप्त के एक पोता हुआ। नामकरण का उत्सव ठाठ से मनाकर अनेक लोगों को दावत देने का प्रस्ताव उसकी पत्नी ने रखा। यह बात सुनकर वसुगुप्त खीझ उठा।

"दावत और उत्सव क्यों मनावे? इन आडंबरों के बीच धन का दुरुपयोग क्यों करे? हमारा पोता हुआ तो इस परिवार के हम लोग चार से पाँच हो गये हैं। इसके साथ खर्च भी बढ़ जाता है। साथ ही हमारी आमदनी को भी बढ़ाना होगा। हमारा जो व्यापार चलता है, उसको हमारा पुत्र संभाल सकता है। मैं कहीं जाकर थोड़ा-बहुत कमा लाऊँगा।" वसुगुप्त ने समझाया।

वसुगुप्त जानता था कि उसकी बहू बड़ी अक्लमंद है। इसलिए उसने अपनी बहू से पूछा–"बेटी! इस मामले में तुम्हारा क्या विचार है?"

"आप कहीं जाकर और अधिक धन कमा लाने का संकल्प रखते हैं तो मेरा विश्वास है कि आप जरूर कमा लायेंगे। आप को सलाह देने की लियाक़त मैं नहीं रखती। मगर आप की यात्रा के लिए आवश्यक आहार तैयार करने की अनुमति दीजिए। बस, मैं आप से यही चाहती हूँ।" बहू ने कहा।

अपनी यात्रा के लिए बहू की स्वीकृति पाकर वसुगुप्त बड़ा प्रसन्न हुआ और आहार तैयार करने की अनुमति दी। बहू ने बड़ी ही क़ीमती चीज़ों को मिलाकर घी में तली खिचड़ी तथा पीने के लिए एक थैली में चीनी शरबत भरकर दी।

बहू का दिया हुआ आहार लेकर वसुगुप्त घर से निकल पड़ा। यात्रा करने की आदत न होने की वजह से थोड़ी ही दूर चलते ही वसुगुप्त के पैरों में छाले पड़ गये। थकावट भी महसूस होने लगी। रास्ता बियाबान था, कहीं एक भी पेड़ नज़र न आता था।

वसुगुप्त अब एक भी क़दम आगे न बढ़ाने की हालत में पहुँचा, तब तक़दीर की बात थी कि उसे एक पेड़ दिखाई दिया। वसुगुप्त की जान में जान आ गई। वह उस पेड़ की छाया में पहुँचा। पेट में चूहे दौड़ रहे थे, फिर भी वसुगुप्त ने सोचा कि झट खाना खा लेना बेकार है। प्यास के मारे उसकी जीभ खिंची जा रही थी। इसलिए उसने थैली निकाली, उसमें से एक घूंट पीकर वह चकित रह गया। वह पानी न था, चीनी मिलाया हुआ जल था।

"मेरी पतोहू तो ऐसी खर्चीली है क्या? तब तो वह जल्द ही मेरा घर डुबो देगी।" यों सोचते वसुगुप्त ने मीठा जल पीना छोड़ खाने के ख्याल से पोटली खोल दी। फिर क्या था, झट उसे घी की गंध आ गई।

"छीः छीः! बहू कैसी खर्चीली है! मेरे घर छोड़ने के पहले ही उसने ऐसा किया है, यदि मैं घर में न रहूँगा तो मेहनत करके जोड़ा हुआ सारा धन ग़ायब होगा!" यों सोच कर वसुगुप्त ने सारा खाना कौओं के आगे डाल दिया और थैली में भरी शरबत को पास के एक बिल में उंडेल दिया।

दूसरे ही क्षण उस बाँबी में से एक काला सांप बाहर आया, फण फैलाये वसुगुप्त की ओर एकटक देखता रह

गया। उसको देखते ही वसुगुप्त पल भर के लिए विस्मित हो गया। फिर उसे डर भी लगा। दूसरे ही क्षण उसमें असाधारण शक्ति आ गई और वह तेज़ी के साथ घर की ओर भागने लगा।

थोड़ी दूर दौड़ने पर थकावट के मारे वह शिथिल हो गया। साँस रुकती प्रतीत हुई। उसने रुक कर पीछे मुड़कर देखा, नाग उसका पीछा करते चला आ रहा था। वह नीचे गिर पड़ा। प्राणों की आशा छोड़ उसने ज़ोर से आँखें मूंद लीं।

"महाशय, उठो! तुम्हें एक वर देकर में अपने रास्ते चला जाऊँगा।" ये शब्द वसुगुप्त के कानों में पड़े।

वसुगुप्त ने संदेह में आकर आँखें खोल देखा। उसके बाजू में ही एक सुंदर युवक खड़ा दिखाई दिया। नाग का कहीं पता न था।

वसुगुप्त साहस बटोर कर उठ बैठा, तब पूछा–"तुम कौन हो?"

"मै नागराज का पुत्र हूँ। उस पेड़ के नीचे के बिल में निवास करता हूँ। जब मैं प्यास के मारे मरा जा रहा था, तब आपने मीठा जल डालकर मेरे प्राण बचाये। इसलिए आप जो माँगेंगे, सो दूंगा। कोई वर मांग लीजिए।" युवक ने उत्तर दिया।

"मेरे जीवन की एक ही कामना है, वह है–धन कमाना और संग्रह करना। मुझे किसी प्रकार के वरदान की आवश्यकता नहीं है। मुझ को सकुशल घर पहुँचने दिया जाय तो वही मेरे लिए दस हज़ार वरदानों के समान है।" वसुगुप्त ने विनयपूर्वक निवेदन किया।

"आप को मुझ से ज़रूर कोई न कोई वर माँगना होगा, तब तक मैं आप को घर जाने न दूंगा।" युवक ने कहा।

वसुगुप्त ने सोचकर बताया–"तब तो हम एक काम करेंगे। मेरी बहू बड़ी ही बुद्धिमति है। तुम मेरे साथ मेरे घर चलो। मेरी बहू जो वर माँगने को कहेगी,

में वही वर तुम से माँगूँगा। उसे देकर तुम अपने रास्ते चले जाओ।"

युवक ने मान लिया। दोनों वसुगुप्त के घर पहुँचे।

वसुगुप्त ने अपनी बहू को बुलाकर सारी बातें समझायीं और कहा—"तुमने पानी में चीनी मिला दी थी, जिस से यह युवक मुझ से वर माँगने का अनुरोध करता है।"

बहू जवाब देने ही जा रही थी, तभी वसुगुप्त की पत्नी बोली—"अजी, आप दिल खोलकर धन क्यों नहीं माँगते?"

वसुगुप्त ने खीझकर कहा—"आखिर धन की सीमा कहाँ? अलावा इसके धन की कामना करने पर धन के कमाने में जो आनंद है, वह जाता रहेगा।"

इतने में उसकी बहू ने कहा—"अगर आप को कोई आपत्ति न हो तो मेरे कहे मुताबिक़ वर माँग लीजिए।"

"कहो बेटी, कहो!" वसुगुप्त ने कहा।

"आप यही वर माँग लीजिए कि आप अपने धन का आप ही मालिक बने!" वसुगुप्त को बहू ने कहा।

वसुगुप्त को हँसी आ गई। अपने धन का आप ही तो मालिक है! उसके अतिरिक्त दूसरा मालिक है ही कौन? फिर भी उसे अपनी बहू की बुद्धिमत्ता पर अपार

विश्वास था, इसलिए उसने उस युवक से वही वर माँगा।

"अच्छा! यही वर देता हूँ!" यों कहकर वह युवक अदृश्य हो गया।

दिन बीतते गये। वसुगुप्त के भीतर विचित्र परिवर्तन होने लगा। धन कमाने की उसकी उत्कट अभिलाषा शनै शनै कम होती गई। उसने तिजोरियों की चाभियों का गुच्छा अपनी पत्नी के हाथ सौप कर कहा—"घर की देखभाल गृहिणी को संभालनी है। घर के खर्च वगैरह के बारे में मुझे तंग मत करो। तुम्हीं संभाल लो! मगर देखो, किसी बात की कमी न हो। धन यदि सुख

के लिए काम न दे तो और किस बात का?"

कुछ दिन बाद उस प्रदेश में भयंकर अकाल पड़ा। वसुगुप्त ने अनाज के अपने गोदाम खुलवा कर ग़रीबों में बाँट दिया। उसने आदेश दिया कि अनाज के वास्ते आनेवालों में से किसी को भी खाली हाथ लौटाया न जाय। धीरे-धीरे महान दाता के रूप में उसका नाम लोकप्रिय हो गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन, मेरे कई संदेह हैं। यदि वसुगुप्त की बहू सचमुच बड़ी बुद्धिमती हो तो उसने ऐसे बेमतलब का वर माँगने को क्यों कहा? वसुगुप्त ने यह जानते हुए भी कि वह बेमतलब का वर है, उसी वर को क्यों माँगा? उस वर में तथा उसके मानसिक परिवर्तन का कैसा संबंध है? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों कहा–"वसुगुप्त यह सोचकर भ्रम में पड़ गया कि उसकी बहू ने जो वर माँगने को कहा, वह बेमतलब का है। मगर उस युवक से पिंड छुड़ाने के लिए उसने वही वर माँगा। मगर वास्तव में वह वर बेमतलब का नहीं है। उस वर के माँगने तक वसुगुप्त अपने धन का गुलाम था। उस धन के वास्ते अपने जीवन के और आशयों को त्याग एक पहरेदार की तरह उसने उसकी रक्षा की। इसलिए धन ही उसका मालिक बना। धन अपने सेवक को थोड़ा भी सुख नहीं पहुँचा सकता है। आखिर स्वादिष्ट पदार्थों के खाने की शक्ति तक को उसने छीन लिया। मगर वर पाने के बाद वसुगुप्त ने धन पर शासन करना प्रारंभ किया। तब उसके मन पर जो बंधन पड़े थे, वे टूट गये।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ ग़ायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

काली लड़की

रतनपुर का राजा बोपदेव बड़ा ही धर्मात्मा था। उसकी पत्नी रानी इंद्रमती बड़ी साध्वी थी। मगर उन्हें कोई संतान न थी। दस-पंद्रह साल तक जब उन्हें कोई संतान न हुई, तब राजा और रानी चिंता के मारे बीमार पड़ गये। जनता ने भी राजा की संतान के वास्ते प्रार्थनाएं कीं, लेकिन कोई फ़ायदा न रहा।

उन्हीं दिनों में राज महल में एक मुनि आया। उसने एकांत में राजा बोपदेव से कहा—"राजन, तुमने पिछले जन्म में जो पाप किया था, उसके फल स्वरूप इस जन्म में तुम्हारे कोई संतान न हुई। तुम दो वर्ष तक राज्य-शासन को छोड़ क्या हिमालयों में तपस्या कर सकते हो?"

मुनि की सलाह के अनुसार बोपदेव ने राज्य का भार रानी इंदुमती को सौंप दिया और वह मुनि के साथ हिमालयों में जाकर वहाँ तपस्या करने लगा। धूप, वर्षा तथा ओस की परवाह किये बिना राजा ने दो वर्ष तक तपस्या की।

दो वर्ष के पूरा होते ही मुनि ने राजा के पास आकर कहा—"राजन, तुम्हारी तपस्या पूर्ण हो गई है। तुम अपनी राजधानी को लौट सकते हो! यह धनुष और बाण ले लो। तुम्हारे रास्ते में एक पुष्प वन है। उसमें विभिन्न रंगों के जंगली सुअर घूमा करते हैं। उनमें से किसी एक सुअर को तुम अपने बाण से मार डालो और उसका मांस अपनी पत्नी को खिलाओ। तुम्हें ज़रूर संतान होगी।"

वोपदेव धनुष और बाण लेकर वहाँ से चल पड़ा। जब वह पुष्प वन के निकट पहुँचा, तब वहाँ सफ़ेद, काले, नर और मादा सुअर झुंडों में दिखाई दिये। राजा

का बाण एक काली मादा सुअर को जा लगा। राजा उसका मांस लेकर राजधानी को लौटा और अपनी पत्नी को खिलाया। रानी इंदुमती गर्भवती हो गई।

राजा यह सपना देखता रहा कि उसके एक सुंदर पुत्र पैदा होगा। उसके राज्य के सभी लोगों की देह सोने के रंग की थी। मगर इंदुमती ने काले रंग की एक कन्या का जन्म दिया। इसे देख सब लोग विस्मय में आ गये। बुजुर्ग यह सोचकर निश्चित हो गये कि इतन समय बाद ही सही राजा के एक संतान हो गई है।

बोपदेव ने निराश में आकर कहा— "क्या मैंने यह कठिन तपस्या इस काली लड़की को जन्म देने के लिए ही की थी?"

रानी इंदुमती ने अपनी पुत्री का चेहरा तक देखने से इनकार किया।

राज परिवार के लोग परस्पर चर्चा करने लगे :

"राजा तो निराश हो गये हैं। उन्हों ने राज-काज तक देखना बंद किया है। बेचारी उस शिशु का इसमें क्या दोष है? संयोग से वह काली रंग की पैदा हो गई है। हमें इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि राजा तथा रानी के विचार बदल जाए!"

मगर कोई यह बता न पाया कि वह उपाय क्या है! उस वक़्त दरबारी जादूगर सोमनाथ ने पूछा—"क्या मैं अपने जादू का प्रयोग करूँ?"

"जरूर प्रयोग करो। हम तुम्हारी बात भूल ही गये । तुम अपने इंद्रजाल के द्वारा राजा तथा रानी का मन बदल डालो, तुम्हें विजय की प्राप्ति हो!" प्रधान मंत्री ने कहा ।

दूसरे दिन सवेरे सोमनाथ अपने उपकरणों के साथ राजमहल में गया। वे उपकरण थे-एक लोहे की नली, उसको सीध में खड़ा करने का एक आसन और एक सफ़ेद गेंद!

जादूगर ने उस नली को आसन की सयायता से सीध में बिठाया, तब कहा– "महाराज, और महारानी जी! मैं आप लोगों जैसे पुण्यात्मा नहीं हूँ। न मैंने तपस्या ही की है। मैं विलकुल एक साधारण मानव हूँ। फिर भी मैं आपको एक अद्‌भुत दिखाता हूँ, सावधानी से देखिए।"

इसके बाद सोमनाथ ने अपने हाथ की सफ़ेद गेंद को सीध में स्थित नली के ऊपरी भाग में डाल अपने मंत्र-दण्ड से उसको नीचे ढकेल दिया। वह गेंद नली के निचले भाग में से नीचे स्थित मेज़ पर गिर गई। जादूगर ने पुनः उस गेंद को उठाकर फिर से नली के ऊपरी भाग में से मंत्र दण्ड के साथ नीचे ढकेल दिया। इस बार भी गेंद नीचे गिर गई, मगर इस बार वह गेंद सफ़ेद न थी, बल्कि काली थी।

"महाराज, महारानी जी! आप ने देखा–सफ़ेद रंग काला हो गया है।

सफ़ेद और काला ये दोनों सत्य नहीं हैं। हम लोगों का भ्रम है! आप लोग सावधानी से परख कर देखिए।" इन शब्दों के साथ सोमनाथ ने काली गेंद को नली के ऊपरी भाग में घुसेड़ कर मंत्र दण्ड से उसे ढकेल दिया। इस बार जब गेंद नीचे गिरी तब वह काली न थी, बल्कि सफ़ेद थी।

"देखिए! रंग में कुछ नहीं रखा है। वह शाश्वत भी नहीं है। हो सकता है कि आज राजकुमारी काली रंग की हो, मगर यह कौन कह सकता है कि उसका रंग बदलेगा नहीं। देवताओं के अनुग्रह से उसका जन्म हुआ है, सदा देवता उसके साथ रहेंगे।" सोमनाथ ने समझाया।

सोमनाथ के इंद्रजाल ने अपना असर डाला, क्यों कि उस दिन से राज-दंपति अपने शिशु के साथ प्यार करने लगे।

उस दिन रात को सोमनाथ की पत्नी ने उससे पूछा—"आप ने गेंद का रंग कैसे बदल डाला?"

"यह तो बड़ा ही आसन तरीक़ा है। लो, इस नली को देखो। यह गेंद के परिमाण से थोड़ा-सा छोटा है। इसलिए गेंद के फिसल कर गिरने से कसी रहती है। इसलिए गेंद को मंत्र दण्ड के साथ ढकेलना होता है। उसमें दो गेंदों के रखने के पश्चात थोड़ी जगह खाली रहती है। इस प्रदर्शन के पूर्व ही मैंने उस नली में एक सफ़ेद गेंद तथा उस पर एक काली गेंद रख दी थी। मैंने जब ऊपर से सफ़ेद गेंद को ढकेल दिया, तब निचले भाग में स्थित सफ़ेद गेंद नीचे गिर पड़ी, मगर जब उस सफ़ेद गेंद को ढकेला, तब नीचे आई हुई काली गेंद नीचे गिर गई। काली गेंद को ढकेलते वक़्त नीचे सफ़ेद गेंद तैयार थी।" सोमनाथ ने कहा।

"ओह! यह कैसा सरल धोखा है?" सोमनाथ की पत्नी ने कहा।

"हाँ, इसका रहस्य समझाने पर आसन है, मगर देखने वालों के लिए अद्भुत है!" सोमनाथ ने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया।

चौथा शिष्य !

कृष्णशर्मा नामक एक पंडित ने एक गुरुकुल चलाकर बड़ी ख्याति प्राप्त की । वृद्ध हो जाने पर अपने अनंतर गुरुकुल चलाने की दक्षता रखनेवाले व्यक्ति को अपने शिष्यों में से चुनना चाहा । ऐसी दक्षता रखनेवालों में चार शिष्य उनकी दृष्टि में आये ।

कृष्णशर्मा ने उन चारों को बुलाकर समझाया–"इस गुरुकुल को चलाने की जिम्मेदारी मैं किसी एक को सौंपना चाहता हूँ । तुममें से कोई इसका संचालन करने का विश्वास रखने वाला आगे आये तो मैं उसकी परीक्षा लेना चाहता हूँ ।"

"मेरी परीक्षा लीजिए ! मैं गुरुकुल का संचालन कर सकता हूँ ।" तीन शिष्य एक साथ बोल उठे ।

"तुम्हारा क्या विचार है ?" गुरु ने चौथे शिष्य से पूछा ।

"मै आप का शिष्य हूँ । मेरी योग्यता और अयोग्यताओं को मुझसे भी ज्यादा अच्छा आप जानते हैं । इसलिए मैं आगे नहीं आया ।" चौथे शिष्य ने उत्तर दिया ।

गुरु ने चौथे शिष्य को गुरुकुल के संचालन का भार सौंप दिया ।

सुमंत की युक्ति

कई साल पहले की बात है! एक पहाड़ी तराई में छोटा-सा गाँव था। वह गाँव एक जमींदार के परिवार का था। गाँव के लोग भोले थे। जमींदार भी भोला था। ग्रामवासी अपने खेतों के पैदावर में से थोड़ा हिस्सा जमींदार को देते थे। जमींदार किसी को तनखाह या भत्ते देता न था। क्योंकि उस गाँव के सारे खेत ज़मींदार के ही थे।

जमींदार के लिए मांस बड़ा ही प्रिय था। ग्रामवासी बारी-बारी से रोज़ एक सेर मांस जमींदार के घर भेजा करते थे। इस नियम का पालन करना ज़रूरी था। यदि कोई इस नियम का उल्लंघन करता तो उसको कठिन दण्ड दिया जाता था।

उस गाँव के छोर पर सुमंत नामक एक व्यक्ति झोंपड़ी डाल रहा करता था। उसके अपना कहनेवाला कोई न था। वह मुर्गियाँ और बतखें पाल कर अपना पेट भर लेता था।

एक दिन जमींदार के घर मांस भेजने की बारी सुमंत की आई। मांस की खोज़ में सुमंत जंगल में गया। क़िस्मत की बात थी कि उसको जंगल में एक बड़ा हिरण हाथ लगा। हिरण को मारने में उसे बड़ी मेहनत करनी पड़ी थी। इसलिए उसे ले जाकर जमींदार को देना उसे पसंद न था। जमींदारी में जो रिवाज़ है, उसको बदलने के लिए सुमंत के मन में एक उपाय सूझा।

सुमंत दिन भर जंगल में ही रह गया। उसने हिरण का सिर काट दिया। आग में भून कर भर पेट खाया और आराम से पेड़ की छाया में सो गया। उस दिन जमींदार को मांस नहीं मिला। वह गुस्से में आया। हाथ में कोड़ा लेकर

भोलानाथ तिवारी

सुमंत को दंड देने के लिए उसका इंतजार करने लगा।

दूसरे दिन सवेरे जब सुमंत हिरण के धड़ को कंधे पर डाल जमींदार के सामने आया, तब उसका क्रोध ठण्डा पड़ गया। सुमंत जमींदार के वास्ते इतना ज्यादा मांस लाया था, इसलिए उसने मन ही मन सुमंत की तारीफ़ भी की।

सुमंत ने हिरण के धड़ को जमींदार के सामने रखा और हांफते खड़ा रह गया। उसको देख रहम खाकर जमींदार ने पूछा– "अरे सुमंत! कल तुम क्यों नहीं आये? इस कमबख्त हिरण ने तुम्हें खूब परेशान किया होगा।"

सुमंत ने सिर हिला कर कहा–"नहीं सरकार! इसके पीछे एक लंबी कहानी है! मैं एक खरगोश मार कर रास्ते में एक बरगद के नीचे थोड़ी देर रुक गया। उस समय कंधे पर स्थित खरगोश की लाश पेड़ पर उछल पड़ी। मैंने घबरा कर ऊपर देखा। आँखों को चौंधियानेवाली एक रोशनी दिखाई दी। उस रोशनी में एक स्त्री ने दर्शन देकर कहा–"अरे दुष्ट! जमींदार को तुम क्या समझते हो? तुम्हारे देवता हैं। तुम जिस जमीन पर रहते हो वह जमीन, तुम जो अन्न खाते हो, वह, तुम जो पानी पीते हो और सांस लेते हो, वे पानी और हवा, ये सब जमींदार के हैं। ऐसे महान व्यक्ति का ऋण चुकाने के लिए क्या तुम ऐसे छोटे जानवर खरगोश को ले जा रहे हो? ऐसे लोगों को मैं इस जमीन पर रहने देना नहीं चाहती। यह बात तुम सबसे जाकर कह दो।" इतना ही क्यों उस देवी ने यह भी बताया कि परसों जो गंगादास मर गया, उसने भैंस का दूध आपको न भेजा था, इसलिए इसी देवता ने उसको मार डाला। रामी ने अपने आवाल के चिचंडे को सबकी आँख बचाकर तोड़ कर खा डाला था, इसलिए उसने खाट पकड़ ली। यदि आइंदा कोई कमबख्त इस तरह धोखा देगा तो देवीजी

खुद उनकी खबर लेंगी। मैं तुरंत जंगल में गया, खोज-ढूंढ कर इस हिरण को लाया। देवीजी मुझ पर प्रसन्न हो गई और उसने मुझसे हिरण का सिर मांगा। मैंने झट दे दिया।"

जमींदार बड़ा खुश हुआ। उसने सुमंत के द्वारा देवीजी का समाचार लाने के उपलक्ष्य में उसकी बड़ी तारीफ़ की।

यह खबर धीरे-धीरे सारे गाँव में फैल गई। ग्रामवासी जमींदार को पहले से कहीं ज्यादा उपहार देने लगे। सब लोग देवीजी से डरने लगे। सुमंत भी अब बड़ा हो गया। जमींदार की सेवा करने में उसका सारा वक़्त बीत जाता था।

जमींदार ने एक दिन सुमंत के हाथ दो मुर्गे देकर देवीजी की बलि देने का आदेश दिया। सुमंत ने जंगल में जाकर दो मुर्गों को जला कर खा डाला और दूसरे दिन गाँव को लौट आया।

"क्या देवीजी ने तुमसे कुछ कहा?" जमींदार ने सुमंत से पूछा।

"सरकार! देवीजी आपकी भक्ति पर प्रसन्न हो गई है। उसने बताया कि वह यहीं पर रह जाएगी, इसलिए उसके वास्ते एक मंदिर बनवाया जाय! उसने यह भी कहा कि उस मंदिर का निर्माण करने के लिए आप जनता के पाप की कमाई खर्च न करे, बल्कि अपना ही धन लगावे।" सुमंत ने कहा।

"सुमंत! बस, देवीजी का अनुग्रह हम पर हो! मैं अपना पूरा धन लगाने को तैयार हूँ।" जमींदार ने हाथ जोड़ कर प्रणाम करते हुए कहा।

सुमंत ने यह प्रचार करके गाँव के लोगों को डरा दिया कि गाँव में यदि किसी पर कोई संकट आता है तो वह देवीजी की महिमा के कारण ही होता है। जमींदार अब पूर्ण रूप से देवीजी का दास बन बैठा था। उसने अपना धन पानी की तरह बहा कर गाँव के बाहर देवीजी के लिए एक बहुत बड़ा मंदिर बनवाया। देवीजी तथा जमींदार के बीच का संवाद-

वाहक सुमंत था। मंदिर में कौन चीज़ किस प्रकार हो, यह बात सुमंत देवीजी से पूछकर जमींदार को बता देता, जमींदार उसकी पूर्ति करता। आखिर सुमंत ने मंदिर के भीतर अति भयंकर शक्ति की मूर्ति का प्रतिष्ठापन कराया।

मंदिर का निर्माण जिस दिन पूरा हुआ, उस दिन गाँव में बड़ा उत्सव मनाया गया और सभी लोगों को दावत दी गई। मंदिर के निर्माण का पूरा खर्च जमींदार ने ही उठाया था। इसके साथ जनता के द्वारा जमींदार की आमदनी भी बढ़ गई।

उसी वर्ष उस प्रदेश में अकाल पड़ा। जनता अन्न के वास्ते तड़पने लगी। जमींदार के पास अन्न का भण्डार भरा पड़ा था। फिर भी उसने अकाल की भयंकता को देख भय के मारे अनाज के गोदामों पर सावधानी से ताले लगवाये।

एक दिन सवेरे सुमंत मैले व फटे कपड़े पहने लंगड़ाते, कराहते जमींदार के घर आया। जमींदार ने सुमंत को देख पूछा– "सुमंत! तुम्हें यह क्या हो गया है?"

"देवीजी ने कहा कि इस गाँव का एक भी आदमी भूख के मारे मर नहीं सकता।" सुमंत ने कहा।

"इसके लिए हमें क्या करना होगा?" जमींदार ने पूछा।

"कहती हैं कि बिना विलंब किये जनता में अब अन्न बांटना है।" सुमंत ने उत्तर दिया।
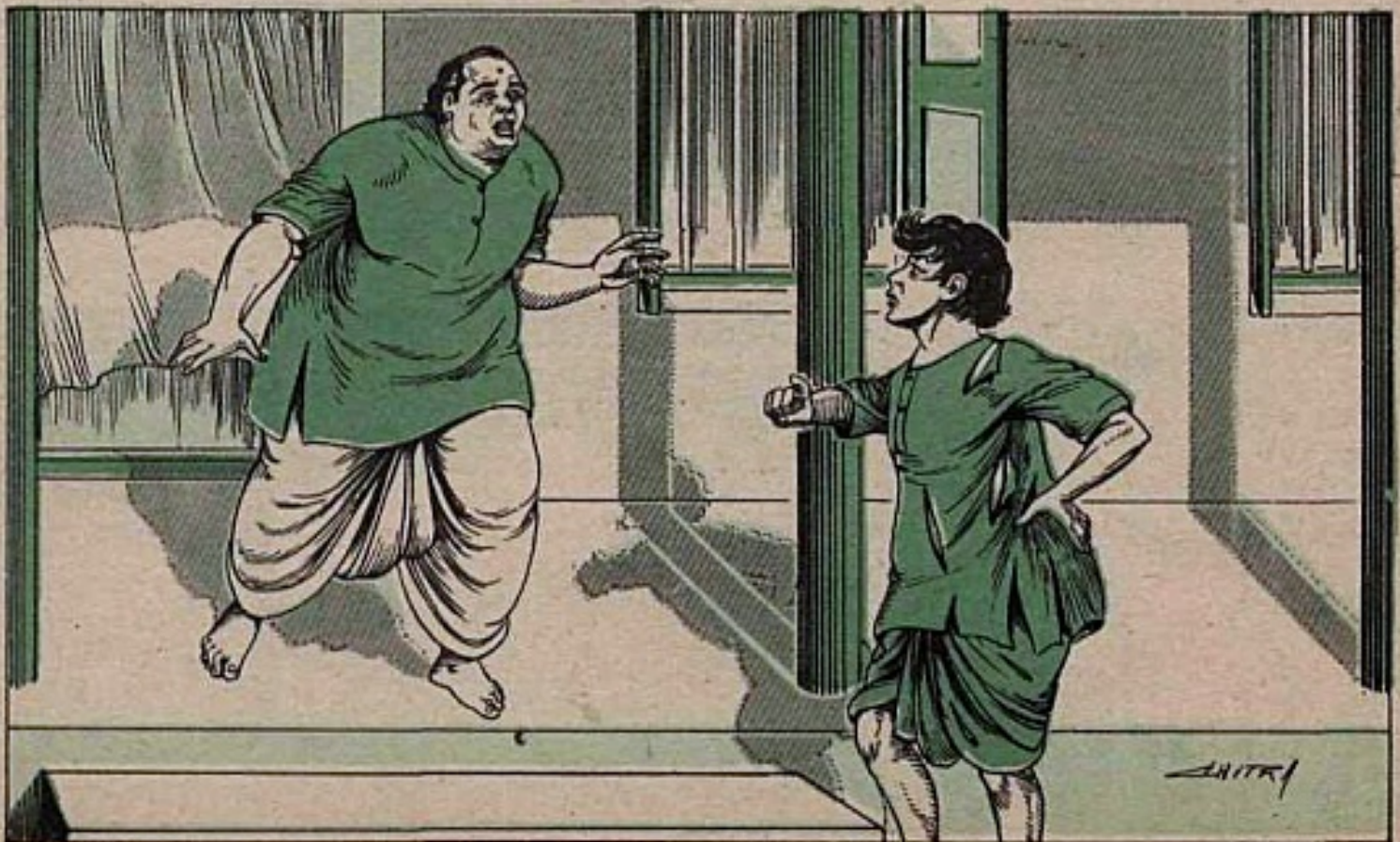
"ऐसा न करने पर क्या होगा?" जमींदार ने उत्सुकता में आकर पूछा।

"देवीजी का कहना है कि सारा गाँव जलकर राख हो जाएगा।" सुमंत ने जवाब दिया।

"शायद अनाज के गोदाम भी जल जाय। अरे सुमंत! हम देवीजी के कहे अनुसार करेंगे, वरना देवीजी नाराज हो जाएँगी।" जमींदार ने अपना भय प्रकट किया।

"सरकार! आप ऐसा न कीजिए! देवीजी हमें ही डरा-धमका रही हैं। मैंने यह बात देवीजी से कही। जमींदार साहब ने बहुत दिनों से जो धन और अन्न जमा कर रखा है, उसको गाँव में क्यों बांटा जाय? इस पर नाराज़ हो देवीजी ने मेरा गला दबाया। आप चुप रहिये, देखेंगे, देवीजी हमारा क्या बिगाड़ सकती हैं?" सुमंत ने समझाया।

जमींदार का कलेजा कांप उठा। उसी वक़्त दूर पर धुआँ उठा। शायद घर जल रहे हैं। इसे देखते ही जमींदार ने सुमंत से कहा—"अरे, तुम्हारी अक्ल कहाँ गई? देवीजी को तुम क्या समझते हो? लो, ये चाभियाँ ले जाकर अनाज के गोदाम खोल दो और जनता में बांट दो।"

सुमंत कुछ कहने को हुआ, इस पर जमींदार ने उसको डांटते हुए कहा—"मुझे तुम्हें समझाने की कोई ज़रूरत नहीं। जाओ! अभी अन्न बांट दो।"

सुमंत ने जो युक्ति की, उसके द्वारा गाँव की जनता अकाल का शिकार होते-होते बच गई। उस दिन से जमींदार जब तक ज़िंदा रहा, तब तक अपराधियों को दण्ड देने का भार उसने देवीजी पर छोड़ दिया। जनता भी देवीजी से डरकर ईमानदारी से मेहनत करने लगी और न्याय पूर्वक जमींदार का हिस्सा चुकाने लगी। जमींदार भी जनता में अत्यंत लोकप्रिय हुआ और उनके द्वारा वह और लाभ उठाने लगा।

प्रायश्चित्त

एक गाँव में कृष्णदास नामक एक महाजन था। वह बेरहमी से सूद पर सूद लोगों से वसूल करता था। क़र्ज़दारों को खूब सताता था। इसलिए ग्रामवासी उससे नाराज थे।

एक दिन सारे ग्रामवासियों ने एक भठियारिन के घर पर इकट्ठे हो कृष्णदास को सबक़ सिखाने की योजना बनाई। उस योजना में भठियारिन को प्रमुख पात्र का भार उठाना था। उसने मान लिया।

थोड़े दिन बाद उस गाँव में एक बहुत बड़ा मेला लगा। उस मेले में दूर-दूर से लोग दल बाँध कर आये। उस वक़्त भठियारिन सिर से पैर तक सोने के क़ीमती गहने पहन कर मेले में गई। सारे मेले में इधर से उधर, उधर से इधर इस तरह घूमती रही जिससे सभी लोगों की दृष्टि उस पर पड़े। सब लोग भठियारिन के क़ीमती गहनों की ओर आँखें फाड़-फाड़कर देखते रह गये। वे गहने गाँव वालों ने उसे उधार दिये थे।

जान-पहचान के लोगों ने भठियारिन के गहनों को देख काना-फूसी की—"खाना बेचकर जीने वाली भठियारिन ने कितना सोना जमा कर रखा है।" उसी वक़्त चार नामी डाकुओं ने उन गहनों की चोरी करने का इरादा किया।

मेला खतम हो गया। उस दिन रात को चारों डाकुओं ने भठियारिन के घर में घुसकर उसका गला घोंटते हुए पूछा—"बताओ, तुमने अपने सारे गहने कहाँ पर छिपा रखे हैं? वरना तुम्हारा गला घोंटकर मार डालेंगे।"

भठियारिन थर थर काँपते हुए बोली—"बेटे! मैं अपने घर में गहनों को सुरक्षित छिपा नहीं सकती थी, इसलिए मैंने अपने

सारे गहने महाजन कृष्णदास के घर में छिपा रखे हैं। कभी मेला-त्योहार आदि पड़ता है, तो उस दिन लाकर पहन लेती हूँ। शाम के होते ही उन्हें ले जाकर महाजन के घर में ही दे आती हूँ।"

"हम लोग अभी जाकर महाजन के घर की तलाशी लेंगे। वहाँ पर अगर गहने नहीं मिले तो तुमको जान से मार डालेंगे, खबरदार!" यों डाकुओं ने भठियारिन काकी को धमकाया। उसको रस्सों से बांधकर उसके मुँह में कपड़े ठूँस दिये, ताकि व चिल्लाये नहीं, तब वे कृष्णदास के घर गये।

डाकुओं को देखते ही कृष्णदास पथरा गया। डाकुओं ने उसको तिजोरी के पास ले जाकर उसे खोलने की धमकी दी।

कृष्णदास ने हाथ जोड़कर कहा—"बेटे! मेरे पास है ही क्या! तुम लोगों से किसने कहा? मेरे पास तो कुछ नहीं है।"

"हमें तो किसी ने नहीं बताया। तिजोरी तो खोल दो।" चोरों ने कहा।

कृष्णदास ने काँपने वाले हाथों से कमर में से चाभियों का गुच्छा निकाला और तिजोरी खोल दी। उसमें गाँव वालों के गिरवी रखे गहने भरे हुए थे।

डाकू खुशी से नाच उठे। सारे गहने निकाल कर अपनी थैलियाँ भर दीं। तब भाठियारिन काकी के घर जाकर बोले—"काकी, तुमने सच बताया। ये गहने रख लो।" यों कहकर थोड़े से गहने उसे देकर डाकू भाग गये।

मगर इस योजना को बनाने वाले बुजुर्गों ने पहले ही कुछ अदमियों का गाँव के बाहर पहरा बिठाया था जिससे डाकू गाँव की सीमा पार करते ही उन्हें बन्दी बनाये। डाकू सब पकड़े गये। इसके बाद वे सारे गहने गुप्त रूप से उन लोगों के घर पहुँचा दिये गये जिन लोगों ने महाजन के यहाँ गिरवी रखे थे। भठिनारिन को डाकुओं ने जो गहने दिये थे, उन्हें उसने वापस किये। इस तरह सब के गहने वापस मिल गये।

१५५. डो डो

डोडो पक्षी की जाति का अंत हो गया है। १६३८ में कुछ मल्लाहों ने मारिशस टापू में इस पक्षी को देखा था। १६८१ में डो डो मर गया है। इसके बाद यह संदेह प्रकट किया गया कि ऐसा पक्षी क्या अस्थित्व में भी था? मगर १८६५ में डो डो का कंकाल मिल गया। उसका परीक्षण करके शास्त्रवेत्ताओं ने यह निर्णय किया कि डो डो के पंख उड़ने योग्य नहीं हैं।
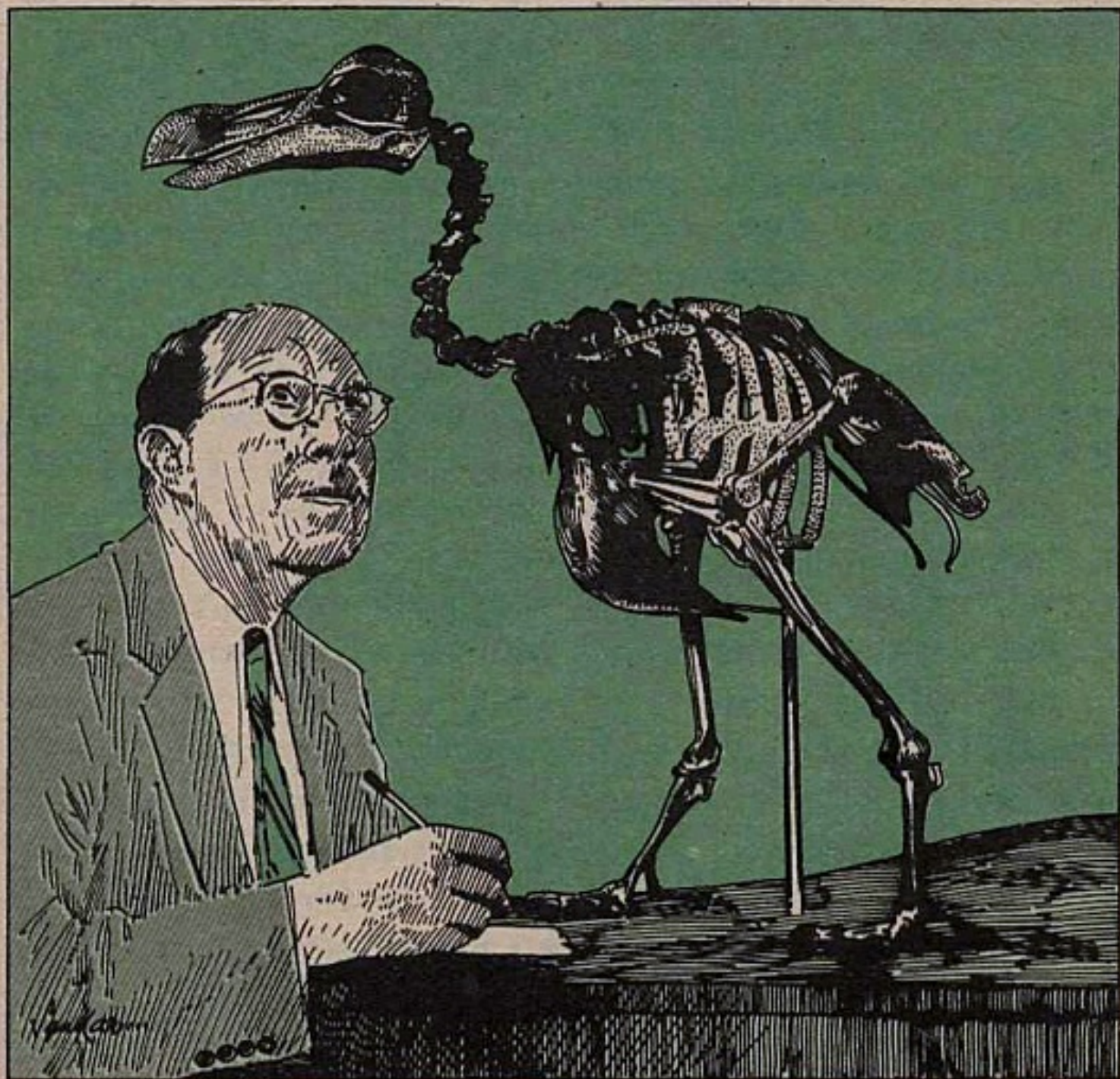
नालायक का राज्य

एक गाँव में रंगनाथ नामक एक आवारा लड़का था। उसकी माँ बड़े बनाकर बेचती और अपना परिवार चलाती। रंगनाथ पढ़ाई में कच्चा निकला, पर वह सोचा करता कि वह बड़ा ही अक़्लमंद लड़का है और उसकी अक़्लमंदी को कोई समझ नहीं पा रहा है। रंगनाथ की माँ ने सोचा कि कम से कम उसका लड़का बड़े बेचने में मदद देगा तो वह कोई दूसरा काम ढूंढ सकती है। मगर रंगनाथ ने बड़े खरीदनेवालों के साथ झगड़ा मोल लिया और उसकी माँ की आशाओं पर पानी फेर दिया। आख़िर रंगनाथ से तंग आकर उसकी माँ ने उसको घर से निकाल दिया।

रंगनाथ का पौरुष जाग उठा। उसने निश्चय कर लिया कि उसकी अक़्लमंदी की सब कोई दाद दे। इस निर्णय पर पहुँचते ही वह घर छोड़कर जंगल में पहुँचा। जंगल निर्जन था, साथ ही अंधेरा फैलने को हुआ। उसे डर लगा, झट एक पेड़ के पास पहुंच कर उस पर चढ़ बैठा।

उस पेड़ पर बहुत दिनों से एक भूत निवास करना था। उस भूत के एक बहन थी। एक मांत्रिक ने उस लड़की को एक बोतल में बंदकर उस पेड़ के तने के पास गाड़ रखा था। पेड़ पर रहने वाला भूत स्वयं उस गड्ढे को खोद अपनी बहन को छुड़ा नहीं सकता था। इसके लिए किसी और की मदद की ज़रूरत थी। भूत ने रंगनाथ को देख लिया। उसने पूछा—"अजी, तुम कौन हो?"

रंगनाथ ने सोचा कि उसी के जैसा एक और आदमी पेड़ पर बैठा है। उसने अपना परिचय दिया—"मेरा नाम रंगनाथ है। मैं बड़ा ही अक़्लमंद हूँ।"

राजेन्द्र बांसवार

"वाह! अक़्लमंद हो तो मेरी छोटी-सी मदद करो तो देखें!" भूत ने पूछा।

अपनी मदद की याचना करनेवाले को देख रंगनाथ फूला न समाया और बोला—"ज़रूर तुम्हारी मदद करूँगा। बोलो, तुम्हें कैसी मदद चाहिए?"

"पेड़ से उतर जाओ। पेड़ के तने के पास खोदकर उसमें गढ़े हुए बोतल को निकालो।" भूत ने कहा।

रंगनाथ पेड़ से उतर कर ज़मीन को उंगलियों से खोदने का प्रयत्न करने लगा। मगर ज़मीन कड़ी थी।

"ज़मीन खोदने के लिए कुदाल चाहिए!" रंगनाथ ने कहा।

"तुम अपनी अक़्लमंदी का प्रयोग करो!" भूत ने सुझाव दिया।

रंगनाथ ने चारों तरफ़ नज़र दौड़ाई। दूर पर कहीं रोशनी दिखाई—"वहाँ पर शायद कोई आदमी है। अभी जाकर कुदाल ले आता हूं।" यह कहकर रंगनाथ रोशनी की दिशा में बढ़ा।

वहाँ पर सचमुच भीलों की एक झोंपड़ी थी। उसमें भील दंपति था। अपनी कल्पना के सत्य होने पर रंगनाथ खुशी से उछल पड़ा और उन दंपति के पास जाकर पूछा—"एक कुदाल हो तो दीजिए, मैं अभी लौटा देता हूँ।" भील दंपति कुदाल का

नाम तक नहीं जानता था। उस दंपति ने रंगनाथ से पूछा—"तुम कौन हो? यहाँ पर क्यों आये हो?"

"मैं बड़ा ही अक़्लमंद हूँ। जल्दी मुझे एक कुदाल दे दीजिए।" रंगनाथ ने फिर पूछा।

वह दंपति रंगनाथ को अपने साथ लेकर एक मुनि के पास पहुँचा। मुनि ने रंगनाथ को देखते ही सारी बातें जान लीं और कहा—"तुम बिलकुल भोले हो! बेटा, तुम्हारे सुधरने के लिए कोई वर माँग लो, मैं दे देता हूँ।"

"मुझे किसी वरदान की ज़रूरत नहीं, कुदाल ही चाहिए।" रंगनाथ ने कहा।

"मैं तुम्हें कुदाल भी देता हूँ।" यों कहकर मुनि ने रंगनाथ को एक कुदाल भी दिया।

रंगनाथ विजय की ख़ुशी में पेड़ के पास लौट आया। पेड़ के तने के निकट खोद कर एक बोतल को बाहर निकाला।

पेड़ पर बैठा हुआ भूत बोला—"शबाश! उस बोतल को तोड़ दो।"

"इतनी सारी मेहनत उठा कर मैंने क्या तोड़ने के लिए बोतल ज़मीन से निकाला? क्या मुझे बुद्दू समझते हो?" रंगनाथ ने पूछा।

"उसमें सोना भरा है। आधा हिस्सा तुम्हें दूंगा।" भूत ने कहा।

अपनी अक्लमंदी से सोना प्राप्त करने पर रंगनाथ ने गर्व का अनुभव किया और बोतल को ज़मीन से दे मारा। बोतल में से मादा भूत बाहर निकल आई।

"मेरा सोना कहाँ?" रंगनाथ चिल्ला उठा। उसने भूतकी को नहीं देखा। पेड़ पर से भूत ने सोने के थोड़े से सिक्के नीचे गिरा दिये। रंगनाथ ने उन सिक्कों को चुन लिया। वह ख़ुशी से अंधेरे में ही घर की ओर चल पड़ा।

बीच रास्ते में बारिश आई। बारिश में ज़्यादा दूर चलना उसको बड़ी मुसीबत सी मालूम हुई। उसी वक़्त उसे मुनि का वर याद आया। उसने अपने मन में कामना की—"मैं जिस देश में रहता हूँ, उस देश में बारिश न हो।"

तत्काल बारिश थम गई। रंगनाथ अपनी अक़्लमंदी पर बड़ा ख़ुश हुआ। घर पहुँचकर माता के हाथ सोने के सिक्के दिये, अपने इस महान कार्य का दर्प के साथ बखान किया। जब रंगनाथ की माँ को मालूम हुआ कि उसके पुत्र ने मुनि के वरदान के द्वारा बारिश को रोक दिया है, तब वह चौंक पड़ी। उसने सोचा कि यह बात लोगों पर प्रकट हो जाएगी तो वे रंगनाथ को मार डालेंगे। फिर भी उसने यह सोचकर अपने मन को

सांत्वना दी कि उसका पुत्र बावरा है, इसलिए शायद उसके कथन में सचाई न हो।

मगर उस दिन से उस देश में बारिश न हुई। भयंकर अकाल पड़ा। लेकिन वह देश संपन्न था, इसलिए राजा ने दूसरे देशों से अन्न मँगवा कर एक वर्ष देश को बचाया। लेकिन दूसरे वर्ष भी देश में बारिश न हुई। आश्चर्य की बात तो यह थी कि आसपास के देशों में भारी वर्षा हुई।

रंगनाथ के वरदान में अब उसकी माँ का विश्वास जम गया। वह अपने पुत्र को साथ ले जंगल में मुनि की कुटी पर पहुँची। किंतु वह मुनि वहाँ पर न था। भील दंपति को भी पता न था कि वह मुनि कहाँ चला गया है।

इसके बाद रंगनाथ की माँ निराश हो घर लौट आई। दूसरे दिन राजमहल में पहुँच कर बोली–"महाराज, आप मेरे पुत्र को प्राण दान दे तो मैं इस देश में बारिश न होने का कारण बताऊँगी। देश को बचाने का उपाय आप ही सोचिए।"

"मैं तुम्हारे पुत्र को अभय देता हूँ, कहो, क्या कहना चाहती हो?" राजा ने कहा। बूढ़ी ने सारा वृत्तांत राजा को सुनाकर कहा–"मेरा नालायक़ बेटा देश के लिए भी किसी काम का न रहा।" इन शब्दों के साथ बूढ़ी ने अपने आँसू पोंछ लिए।

राजा का मन व्याकुल हो उठा। उसने अपने मंत्री से पूछा–"महामंत्री, क्या मैं अपने वचन का पालन कर अपयश से अपने को बचाऊँ या इस नालायक़ युवक का वध करके जनता के प्राण बचाऊँ?"

मंत्री ने पल भर सोचकर कहा–"महाराज! रंगनाथ नालायक़ कैसे होगा? वह प्राणों के साथ जीवित रहे तो आप सम्राट बन सकते हैं!"

"यह कैसे संभव है?" राजा ने पूछा।

"रंगनाथ ने यह वर माँग लिया है कि वह जिस देश में रहेगा, उस देश में बारिश न हो। इसका मतलब है कि वह जिस देश में रहेगा, उस देश में बारिश न होगी। इसको हम जिस देश में लगातार दो वर्ष रखेंगे, उस देश की आर्थिक दशा बिगड़ जाएगी और वह देश बड़ी आसानी के साथ हमारे अधीन हो जाएगा।" मंत्री ने सुझाया। मंत्री का विचार खूब कारगार हुआ। कुछ ही वर्षों में आसपास के सभी देश राजा के वश में आ गये। वह सभी देशों का सम्राट बना। अब राजा के सामने यह समस्या पैदा हो गई कि रंगनाथ को कहाँ भेजा जाय? अब सारे देश राजा के ही हैं। उस साम्राज्य में रंगनाथ जहाँ भी रहेगा, वहाँ पर अकाल पड़ेगा।

उस हालत में मंत्री ने राजा को एक अति उत्तम सलाह दी। उस सलाह के अनुसार राजा ने एक छोटे-से गाँव को स्वतंत्र राज्य के रूप में घोषित किया और रंगनाथ का उस गाँव के राजा के रूप में अभिषेक किया। रंगनाथ के राज्य में बारिश न होगी और न पैदावर होगी। मगर रंगनाथ के राज्य को सम्राट के यहाँ से धन की सहायता बराबर प्राप्त होती रहेगी। आलसी और विलासी जीवन बिताने वालों के लिए वह एक अनोखा देश होगा। एक मुनि ने एक अपात्र व्यक्ति को जो वरदान दिया, उसके फलस्वरूप एक छोटा-सा गाँव एक राज्य के रूप में बदल गया।

दुष्टों से दूर रहो!

जनार्दन का पिता एक शहर में व्यापार करता था। उसने व्यापार में हज़ारों रुपये कमाये। अपना अंतिम समय निकट आया जानकर व्यापारी ने जनार्दन को बुलाकर समझाया-"बेटा, मेरे मरने के बाद तुम इस शहर में न रहो। कोई अच्छा स्थान देख अपना स्थिर निवास बना लो। मैंने जो कुछ कमाया, वह तुम्हें तथा तुम्हारे बच्चों के लिए आठ-दस पीढ़ियों तक काम देगा! तुम आराम से अपने दिन बिताओ।" यों समझा कर व्यापारी ने सदा के लिए अपनी आँखें मूँद लीं।

पिता के मरने के बाद जनार्दन के सामने एक बड़ी समस्या पैदा हो गई। वह यह कि किसी प्रदेश को अपना स्थिर निवास बना ले? अपने गाँव में उसके साथ स्नेह और वात्सल्य दिखाने वाले लोग अनेक हैं, मगर वह गाँव उतना सुंदर नहीं। वहाँ पर पानी की अच्छी सुविधा नहीं, प्राकृतिक दृश्यों का अभाव है, उल्टे वह पथरीला प्रदेश है।

यह सोचकर जनार्दन अपनी जायदाद को सोना तथा नक़द के रूप में बदल कर एक अच्छे स्थान की खोज में चल पड़ा। दो हफ़्ते बाद उसको एक सुंदर प्रदेश पसंद आया। समुद्र के निकारे स्थित वह एक छोटा सा देहात था। देहात के चारों तरफ़ झाऊ के बगीचे और रेतीले टीले थे। उस शीतल शांत वातावरण ने जनार्दन को आकृष्ट किया। वह झाऊ के बगीचे के बीच एक झोंपड़ी बनाकर वहीं स्थाई रूप से रहने लगा। रोज़ शाम को वह एक देहाती डोंगी में समुद्र पर घूमने जाता था।

उस देहात के लोगों का प्रमुख पेशा मछली पकड़ना था। जब उन लोगों ने बिना मेहनत किये आराम से खा-पीकर

दुर्गाशंकर प्रसाद

सुख भोगनेवाले को देखा तो उसके प्रति उन लोगों के मन में ईर्ष्या जगी ।

एक दिन दुपहर के वक़्त जनार्दन अपनी झोंपड़ी के सामने झाऊ के नीचे खाट डालकर लेट गया । बाहर कड़ी धूप पड़ रही थी । फिर भी झाऊ के उस बगीचे में ठण्डी हवा बह रही थी ।

किसी को पुकार सुनकर जनार्दन चौंक कर जाग पड़ा ।

खाट के पास कोई आदमी खड़ा हुआ था । उसके तांबे के रंग की लंबी दाढ़ी थी । सिर मुड़ा हुआ था । लाल रंग का कुर्ता, काली धोती पहने हुए था । उसके गले में कौए के परों की माला पड़ी थी । उसकी आँखें लाल थीं, उसने मौन भंग करते हुए कहा–"ऐ जवान लड़के! कड़ी धूप पड़ रही है । लोटे भर ठण्ड़ा पानी लेते आओ ।" जनार्दन पानी लाने झोंपड़ी के भीतर चला गया ।

"ठहरो, नौ जवान! गाढ़े मट्ठे में थोड़ा नमक मिला कर लेते आओ । प्यास के मारे मेरी जीभ सूखती जा रही है ।" आगंतुक ने कहा ।

जनार्दन ने कहा–"अच्छी बात है!" तब वह भीतर जाने को हुआ ।

"छाछ में नींबू का रस भी निचोड़ दो । स्वादिष्ट रहेगा ।" दाढ़ीवाला पुकार उठा ।

जनार्दन दाढ़ीवाले के मांगने के अनुसार एक गिलास में छाछ, नमक और नींबू का रस निछोड़ कर ले आया ।

तब तक दाढ़ीवाला जनार्दन की खाट पर बैठकर इतमीनान से गुनगुना रहा था । उसने गिलास हाथ में लेकर मट्ठा पी लिया, तब कहा–"यह गिलास बड़ा सुंदर है । कोई हड़प लेगा । घर में रख आओ ।"

जनार्दन गिलास को अंदर छोड़ बाहर आया तो देखता क्या है, दाढ़ीवाला खाट पर पैर पसार कर लेटा हुआ है । जनार्दन को अपने निकट आया देख बोला–"कड़ी धूप का वक़्त है! नींद आ रही है । थोड़ी

देर सोकर तब उठूंगा।" यों कहते सो गया और कुछ ही मिनटों में खुर्राटे लेने लगा।

जनार्दन से कुछ कहते न बना। वह झोंपड़ी के बाहर एक चबूतरे पर बैठकर शाम तक अपना समय काटने लगा। संध्या के होने पर दाढ़ीवाला जंभाइयाँ लेते हुए उठ बैठा, तब बोला—"अंधेरा हो चला है। अकेले की ज़िंदगी। घर में दिया तक जलानेवाला कोई नहीं।" यों कहते दाढ़ीवाला सीधे झोंपड़ी के भीतर चला गया, आले में स्थित दिया जलाया।

दाढ़ीवाले की यह करनी देख जनार्दन खीझकर बोला—"खूब अंधेरा फैल गया है। अब तुम जा सकते हो!"

दाढ़ीवाले ने जनार्दन की ओर एड़ी से चोटी तक देख गरजकर कहा—"अबे, तुम कौन हो? मेरे घर आकर मुझ को ही दुतकारते हो? जाओ यहाँ से! वरना तुम्हारी बेइज्ज़ती होगी।" इन शब्दों के साथ ज़बर्दस्ती जनार्दन को ढकेल कर दर्वाजे बंद कर लिये।

रात भर जनार्दन दर्वाजे पर दस्तक देते झोंपड़ी के बाहर खड़ा रहा। दाढ़ीवाला यह कहकर बेखबर सो गया—"मेरी झोंपड़ी के दर्वाजे टूट जायेंगे तो उसकी क़ीमत तुम्हीं को चुकानी होगी।"

सवेरा हुआ। गाँव के लोग मछलियों का शिकार करने चल पड़े। उन सब को बुलाकर जनार्दन ने सारा वृत्तांत सुनाया और कहा—"आप लोग यह अन्याय देखते हैं न! इस को समझाते क्यों नहीं?"

इतने में दाढ़ीवाला दर्वाजा खोल बाहर आया और गाँव वालों से बोला—"यह कोई पागल सा लगता है। मेरे घर आकर हो-हल्ला मचा रहा है कि यह उसका घर है।"

जनार्दन गुस्से में आकर बोला—"आप लोग ही बताइए कि यह झोंपड़ी मेरी है या इसकी! आप लोग रोज़ इस ओर से गुजरते क्या मुझे इस घर में देख नहीं रहे हैं? इस बदमाश को अच्छा सबक़ सिखाइये।"

गाँव वालों ने जनार्दन की ओर आपादमस्तक परख कर देखा और कहा–"अरे कमबख्त! तुम कौन हो? देखने में चोर लगते हो! यह घर इसी दाढ़ीवाले का है। हम रोज़ इसको देख रहे हैं। हमने आज तक तुमको नहीं देखा। तुम यहाँ से चुपचाप अपने रास्ते चलते बनो, वरना तुम्हारी हड्डी-पसली तोड़ देंगे।" यों जनार्दन को धमकाया।

जनार्दन चकित रह गया। उसने भांप लिया कि सारे गाँव वाले ईर्ष्यावश उसकी सारी संपत्ति हड़पना चाहते हैं। उसने सब को डांटते हुए पागल की तरह पथरायी आँखों से कहा–"तुम लोगों ने आज मेरी आँखें खोल दीं। मैं आज तक इस घर को अपना समझ रहा था। क्या मैंने पेटी में जो सोना छिपा रखा है, वह मेरा नहीं?" यों भोले बनकर उनकी तरफ़ देखा।

गाँववालों ने सोचा कि जनार्दन का दिमाग खराब हो गया है, तब सब ने व्यग्र होकर उससे पूछा–"तुम्हारा नहीं। वह सारा सोना हम लोगों का है। जल्द बताओ, उस सोने को तुमने कहाँ पर छिपा रखा है?"

जनार्दन ने दूर पर दिखाई देनेवाले ऊँचे रेतीले टीले को दिखा कर कहा–"सोने से भरी मेरी पेटी उस रेतीले टीले में है।"

तब क्या, सब लोग टीले की ओर भाग गये। सब ने उस सोने को अपना बनाना चाहा। दाढ़ीवाले के साथ जब गाँव के सभी लोग टीले की ओर भाग खड़े हुए, तब जनार्दन ने इतमीनान से निश्वास लिया, झाऊ के तने में गाड़ कर रखी गई सोनेवाली पेटी को निकाला। उसी वक़्त डोंगी में सवार हो दूर चला गया।

जनार्दन को तब पता लगा कि उसके पिता ने अच्छे स्थान की जो बात बताई, उसका अर्थ अच्छे लोगों के बीच जा बसना है। वह अपने निजी गाँव को गया। उन लोगों के बीच सुखपूर्वक अपना शेष जीवन बिताने लगा।
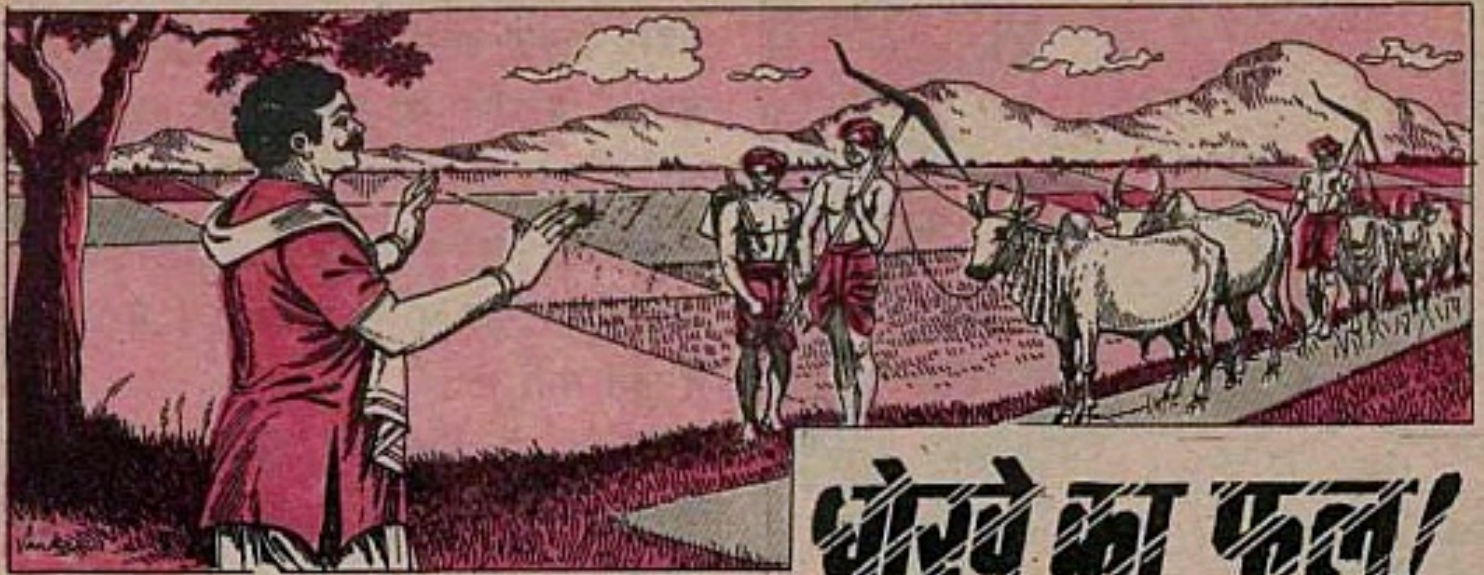
धोखे का फल!

एक गाँव में नारायण नामक एक साधारण किसान था। उसकी संपत्ति के नाम पर चार-पांच एकड़ जमीन और दस-बारह मवेशी थे।

एक दिन गाँव के पटवारी ने नारायण से कहा—"नारायण, हमारे गाँव के कुछ ब्राह्मण अपनी पाँच एकड़ ज़मीन बेचकर दूसरे गाँव में जा बसना चाहते हैं। उसका दाम भी कोई ज्यादा नहीं, एक हज़ार रुपये मात्र। क्यों न ख़रीद लेते?"

नारायण ने उस ज़मीन को ख़रीदने की इच्छा प्रकट की, ब्राह्मणों को उसका मूल्य चुकाया। कागज़ लिखवा कर ज़मीन पर क़ब्जा कर लिया। ब्राह्मण दाम लेकर दूसरे गाँव को चले भी गये।

एक महीना बीत गया। उसी गाँव में गोविंद नामक एक लोभी था। जब उसे मालूम हुआ कि नारायण ने ब्राह्मणों से कम दाम पर ज़मीन ख़रीद ली है, वह ईर्ष्या से भर उठा, पटवारी के यहाँ जाकर बोला—"महाशय, पाँच एकड़ ज़मीन सस्ते में मुझे दिलावा देते तो मैं आप को थोड़ा-बहुत भेंट कर लेता।"

रुपयों की बात सुनते ही पटवारी के मन में लोभ पैदा हुआ। दोनों ने आपस में चर्चा करके नारायण से उस ज़मीन को हड़पने की योजना बनाई।

एक दिन सवेरे जब नारायण के नौकर नये खेत को जोतने खेत पर पहुँचे, तब गोविंद ने उन्हें डाँट कर भेज दिया—"यह खेत मेरा है, जाकर नारायण से कह दो।"

दूसरे दिन नारायण ने गोविंद के पास जाकर पूछा—"गोविंद, मैंने सुना है कि तुमने मेरे खेत को जोतने से अडंगा लगा रखा है, बात क्या है?"

गौतम कुमार

"हाँ, बात ठीक है। मैंने जिस खेत को खरीदा है, उस खेत को तुम्हारे नौकर कैसे जोत सकते हैं?" गोविंद ने कहा।

यह बात सुनने पर नारायण के आश्चर्य की सीमा न रही। उसने कहा–"उस खेत को पटवारी ने ही मुझे खरीदवा दिया है। मैंने एक हज़ार रुपये में खरीद लिया है।"

गोविंद नारायण को पटवारी के घर ले गया और कहा–"अजी, पटवारी जी! मैंने जिस खेत को खरीदा था, उसे क्या आपने नारायण को बेच दिया है! मैंने पाँच साल पहले ही उस खेत को खरीद लिया था।"

पटवारी ने कोई कागज़ उलट-पलट कर देखने का अभिनय करते हुए गोविंद से कहा–"माफ़ कीजिएगा, भूल हो गई है। आप ने ब्राह्मणों के यहाँ से जो यह जमीन खरीदी थी, उसका ब्यौरा पुराने कागजातों में है। मैं नया पटवारी हूँ। इसलिए उन ब्राह्मणों ने मुझे धोखा दिया है। मैं आफ़त में फँस गया हूँ।"

"तब तो आप या तो मेरे रुपये मुझे वापस दिलाइये या मुझे खेत जोतने दीजिए। आपने ही कागज़ लिख कर मुझे दिया था कि ब्राह्मणों ने वह खेत मुझे बेच दिया है।" नारायण ने पटवारी से पूछा।

"मेरे खेत को तुम्हारा खरीदना ही अपराध है! उसे तुम कैसे जोत सकते हो? तुम अपने रुपये उन ब्राह्मणों से ही वसूल करो, नहीं तो न्यायाधिकारी के पास जाकर फ़रियाद कर लो।" गोविंद ने गरज कर कहा।

"अच्छी बात है! मैं न्यायाधिकारी से ही फ़रियाद करता हूँ।" यों कहकर नारायण वहाँ से चला गया।

नारायण के चले जाने पर पटवारी ने गोविंद से कहा–"राजा के दीवाने आम में मेरे जान-पहचान का एक आदमी है। मैं इस बात का हिसाब वगैरह लिखकर उसके हाथ दे आऊँगा कि उस खेत को पाँच साल से तुम्हीं जोत रहे हो और तुम्हीं उसका लगान भी चुकाते हो। वह

ज़मीन संबंधी हिसाब-क़िताब में इन कागज़ों को जोड़कर रख देगा। तब वह खेत तुम्हारा ही हो जाएगा।"

इसके बाद दूसरे दिन वे दोनों शहर में गये। राजकर्मचारी से साझा करके उसको सौ रुपये घूस दिया और कहा–"भाई साहब! यह काम सफल हो जाना चाहिए।"

राज कर्मचारी ने नक़ली हिसाब के कागज़ात लेकर कहा–"यह काम बड़ा ही खतरनाक है। काम बन जाएगा तो पचास रुपये तुम्हें और देना होगा, समझें!"

गोविंद ने मान लिया। अपनी चाल के चलते देख खुशी-खुशी पटवारी तथा गोविंद अपने गाँव लौट आये। तीसरे दिन नारायण, गोविंद तथा पटवारी ने न्यायाधिकारी के पास जाकर अपने अपने बयान दिये।

"नारायण! इस बात का कोई सबूत है कि तुमने ब्राह्मणों से यह खेत खरीद लिया है?" न्यायाधिकारी ने पूछा।

"इसी पटवारी साहब ने मेरे हाथों से ब्राह्मणों को रुपये दिलवा कर उनका खेत मेरे नाम लिखाया है।" नारायण ने जबाब दिया।

इसके बाद न्यायाधिकारी ने गोविंद से पूछा–"तुम ने इसके पूर्व ही ब्राह्मणों के खेत को खरीद लिया हो तो उस संबंधी कागजात कहाँ?"

गोविंद ने न्यायाधिकारी को जाली रसीदें दिखाकर कहा–"मैं खेत को खरीद कर उसमें पाँच सालों से फ़सल पैदा कर रहा हूँ। इस संबंधी रसीदें देख लीजिए।"

इस पर न्यायाधिकारी ने उन लोगों से कहा–"तुम लोग दो दिन बाद फिर अदालत में आ जाओ। इस ज़मीन से संबंधित सारे कागज़ात राजा के दीवाने आम से मँगवा देता हूँ।"

न्यायालय से लौटते हुए गोविंद ने कहा–"पटवारी साहब! आप की अक्ल की जो भी तारीफ़ की जाय, थोड़ी ही होगी! अब बेचारा! नारायण एक हज़ार रुपयों के साथ खेत भी खो बैठेगा!"

"न्यायाधिकारी जो फ़रियाद भेजेंगे, वह हमारे मित्र राज कर्मचारी के हाथ लगेगी। वह हमारे अनुकूल ही लिख कर न्यायाधिकारी के पास भेज देगा।" पटवारी ने उत्तर दिया।

तीसरे दिन राजा के दीवाने आम से दो नौक़रों ने आकर न्यायाधिकारी के हाथ कोई कागज़ात दिये। उन्हें देखने के बाद न्यायाधिकारी ने नारायण, गोविंद तथा पटवारी को बुला भेजा और कहा—"तुम लोगों की फ़रियाद का उत्तर दीवाने आम से आ गया है।"

यह बात सुनते ही गोविंद और पटवारी ने एक दूसरे का चेहरा देखा, दोनों के चेहरे ख़ुशी के मारे खिल उठे। नारायण इस विश्वास के साथ निश्चल खड़ा था कि आख़िर उसके प्रति पूर्ण न्याय होगा।

न्यायाधिकारी ने अपना फ़ैसला यों सुनाया—"पांच एकड़ ज़मीन नारायण की है! उस ज़मीन को राजा के पिता ने नारायण के दादा को इनाम में दिया था। नारायण के पिता ने उस ज़मीन को गरीब ब्राह्मणों में दान किया। उसी ज़मीन को फिर नारायण ने मूल्य देकर ख़रीदा। इसलिए इस में उसकी कोई ग़लती नहीं है। अब नारायण को नुक़सान मद्दे पटवारी तथा गोविंद को मिलकर एक हज़ार रुपये चुकाने हैं।"

गोविंद और पटवारी ने एक स्वर में पूछा—"ऐसा क्यों?"

"तुम दोनों ने मिलकर न केवल जाली रसीदें पैदा कीं, साथ ही एक राजकर्मचारी को घूस देकर उसके द्वारा यह अपराध करने को विवश किया। इसलिए राजा ने तुम दोनों को यह दण्ड दिया है।" न्यायाधिकारी ने कहा।

इस पर गोविंद तथा पटवारी ने मिलकर नारायण को एक हज़ार रुपये चुकाये। बाद को उन्हें मालूम हुआ कि गुप्तचरों ने दीवाने आम के कर्मचारी की चोरी का पता लगाया है।

इन्द्र के भरोसे पर विश्वास करके राहू आंजनेय पर हमला करने को गया। आंजनेय ने राहू को नख-शिख पर्यंत देखा और उसको एक फल समझकर पकड़ने को हुआ। आंजनेय का उग्र रूप धारण कर अपनी ओर बढ़ते देख राहू घबड़ाये इंद्र के पास दौड़ गया और बोला–"यह लड़का मुझे मारने जा रहा है। बचाओ!"

"तुम डरो मत!" इन शब्दों के साथ इंद्र ने अपने हाथी को आगे बढ़ाया।

घींकार करते अपनी ओर बढ़ने वाले ऐरावत को देख आंजनेय ने सोचा–"यह फल तो सफ़ेद है। मैं इसे खाकर अपनी भूख मिटा लेता हूँ।" यों सोचकर वह ऐरावत पर हमला कर बैठा, इस पर वह घबराकर भाग गया। इसे देख इंद्र कुपित हुआ और उसने आंजनेय पर अपना वज्रायुध फेंका। वज्रायुध की चोट खाकर आंजनेय का जबड़ा टूट गया। वह उदयाद्रि पर गिरकर निश्चल पड़ रहा।

इसे देख वायुदेव का दुख उमड़ पड़ा। उसे क्रोध भी आया। उसने संचार करना भी छोड़ दिया। इस बीच अंजना देवी पर्णशाला को लौट आयी। बिस्तर पर उसका लड़का न था। वह अपने पुत्र के वास्ते तरह-तरह से रोने-धोने लगी।

केसरी ने उसको सांत्वना देते हुए समझाया–"रोओ मत! तुम्हारे पुत्र ने उदय सूर्य को देख फल समझा और इस भ्रम में पड़कर उसको पकड़ने गया। यह

२. सुग्रीव का मन्त्री

बात राहू ने इंद्र को बताई । इंद्र ने आकर उसका जबड़ा तोड़ दिया है । इस तरह तुम्हारा लड़का बेहोश हो पूर्वी पहाड़ पर पड़ा हुआ है । वायुदेव ने इंद्र पर कुपित हो विश्व का संचार करना त्याग दिया है । तुम्हारे पुत्र के समस्त प्रकार के शुभ होंगे!" ये बातें सुन अंजना को तसल्ली मिल गई ।

वायुदेव के रुष्ट हो स्तंभित हो जाने पर देवता सब घबरा गये; ब्रह्मा के पास जाकर सब ने निवेदन किया कि इंद्र ने आंजनेय का जबड़ा तोड़ डाला है, जिससे वह बेहोश हो गया है । वायुदेव रुष्ट हो गया है । इसलिए उनकी रक्षा करें ।

इस पर ब्रह्मा हंस वाहन पर सवार हो वायुदेव के निकट गये और बोले– "बेटे, तुम समस्त प्राणियों को प्राण प्रदान करने वाले हो! सर्वत्र संचार करने वाले हो! क्या तुम्हारा रुष्ट होना न्याय संगत है?"

तब वायुदेव ने जाकर बेहोश पड़े आंजनेय को अपने हाथों में उठाया और ब्रह्मा के चरणों पर रखकर उनको प्रणाम किया । ब्रह्मा ने अपने हाथों से आंजनेय का स्पर्श किया जिस से उसमें फिर से चेतना आ गई ।

इसे देख वायुदेव प्रसन्न हुआ और जगत का संचार करने चल पड़ा । तब ब्रह्मा ने देवताओं से कहा–"यह लड़का समस्त लोकों को प्रसन्न रखने वाला है । इस बालक को हम सब वरदान देंगे । यह तो साक्षात् शिवजी का अवतार है!"

इस पर भूदेवी ने आंजनेय को वेद-शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति दी । वरुण ने पानी के भय से बचने का वर दिया । यमराज ने आंजनेय को मृत्यु और बुढ़ापे के भय के विना वरदान दिया । कुबेर ने युद्धों में आंजनेय को विजय प्राप्त करने का वर दिया । विश्वकर्म ने आंजनेय को कनक कुंडल दिये । इंद्र ने आंजनेय को हनुमान नामक नामकरण किया और

वज्रायुध के द्वारा उसे किसी प्रकार की हानि न होने का वर दिया। (हनुम का अर्थ जबड़ा है) ब्रह्मा ने हनुमान को दीर्घायु तथा चिरंजीवी होने के वर प्रदान किये।

इसके उपरांत ब्रह्मा ने वायुदेव से कहा– "तुम्हारा पुत्र अकलंक यश प्राप्त करेगा। वह कभी पराजित न होगा। पर्वत जैसी धीरता रखने वाला होगा। अणिमा इत्यादि सिद्धियाँ इसे प्राप्त होंगी। संकल्प मात्र से यह समस्त विश्व को देख सकेगा। यह विरागी होगा। इसके मन में किसी प्रकार का काम न होगा। यह कामरूपी है। इसमें अपार शौर्य, धैर्य, दया इत्यादि गुण भरे होंगे। यह अनेक अद्भुत कार्य करेगा। उन सब कार्यों को तुम स्वयं देखोगे।" यों समझाकर ब्रह्मा चले गये। देवता सब हनुमान के बारे में तथा उसके द्वारा सूर्य को पकड़ने का वृत्तांत इत्यादि चित्र-विचित्र ढंग से कहते-सुनते वहाँ से चले गये।

इसके बाद वायुदेव ने हनुमान को ले जाकर अंजना के हाथ सौंप दिया। अपने पुत्र को फिर से पाने की खुशी में उसकी आँखों से आनंद बाष्प निकल आये। उस प्रदेश में तपस्या करने वाले लोग हनुमान का समाचार सुनकर आश्चर्य प्रकट करते

कहने लगे–"सूर्य की कांति पड़ने मात्र से देह पर ताप पैदा होता है। ऐसी हालत में यह बालक सूर्य को कैसे पकड़ पाया? अपने मुँह में सूर्य को कैसे डाल लिया?"

केसरी को जब यह मालूम हुआ कि उसके पुत्र को सब देवताओं ने वर दिये हैं, तब उसकी प्रसन्नता की सीमा न रही।

हनुमान ज्यों-ज्यों बढ़ता गया, त्यों-त्यों वह समस्त प्रकार का ज्ञान प्राप्त करके भी नटखटपन के काम करता रहा। उसके माता-पिता ने अनेक प्रकार से उसे समझाया–"बेटे! अच्छे काम करने हैं, लेकिन मर्कट की चेष्टाएँ नहीं करनी हैं।

दरिद्रों को तंग करना उचित नहीं है!" फिर भी हनुमान ने उनकी एक न सुनी। वह वानर चेष्टाएँ करते अपने दिन बिताने लगा।

ब्राह्मणों की समझ में न आया कि जगत की रक्षा करने पैदा हुआ हनुमान बचपन में ही ये नटखटपन के काम क्यों करता है? यदि उसे शाप देना चाहे तो ब्रह्मा का वरदान उसे प्राप्त है कि किसी का शाप उसे न लगेगा। अलावा इसके ऐसे शक्तिशाली पर कोई नियंत्रण न रहा तो क्या वह सारे लोकों को तहस-नहस न कर बैठेगा? इसलिए ब्राह्मणों ने कहा कि हनुमान अपनी शक्ति से अपरिचत रहे। तुरंत हनुमान सत्व गुणी बन गया। अपने पुत्र में यह परिवर्तन देख अंजना और केसरी बहुत संतुष्ट हुए।

थोड़े दिन बीत गये। एक दिन अंजना ने हनुमान से कहा—"बेटा, किष्किंधा में वाली और सुग्रीव नामक दो भाई हैं। मेरी माता अहल्या ने गुप्त रूप से इंद्र तथा सूर्य के द्वारा उनका जन्म दिया है। यह बात मालूम होते पर मेरे पिता गौतम ने उन्हें वानर बन जाने का शाप दिया है। इसलिए वे तुम्हारे मामा लगते हैं। तुम किष्किंधा में जाकर सुग्रीव के आश्रय में रहो! यदि किसी कारण से वाली तथा सुग्रीव के बीच शत्रुता पैदा हुई तो तुम भूल से भी सही, वाली का वध न करना! समझें!"

हनुमान ने अपनी माता को प्रणाम किया। उससे विदा लेकर किष्किंधा को चला गया। वाली तथा सुग्रीव ने उसका स्वागत किया। वह सुग्रीव का मंत्री बनकर रहने लगा। उस समय उसके मन में वेद तथा शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा पैदा हुई।

एक दिन प्रात:काल हनुमान अपने कालकृत्यों से निवृत्त हो सूर्योदय के समय तक गगन मार्ग में उड़कर सूर्य के पास पहुँचा और उसको प्रणाम किया।

सूर्य ने प्रसन्न होकर कहा–"तुम्हारे संकल्प की सिद्धि हो जाय! बेटे! तुम किस काम से आये हो?"

"महानुभाव! मैं वेद तथा शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करने आया हूँ।" हनुमान ने उत्तर दिया।

"बात तो सही है, मगर मैं मेरु पर्वत के चतुर्दिक अत्यंत वेग के साथ घूमा करता हूँ। मुझ से शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना तुम्हारे लिए अत्यंत कठिन होगा।" सूर्य ने समझाया।

इसके उत्तर में हनुमान ने कहा–"महानुभाव! क्या मैं उदय पर्वत पर अपना एक पैर तथा अस्ताद्रि पर दूसरा पैर रखकर आपके आगे आगे चलते हुए पढ़ लूँ?"

सूर्य इस पर प्रसन्न हो बोला–"बेटा, तुम जैसा व्यक्ति इस सृष्टि भर में कोई दूसरा नहीं है। तुम दोनों पर्वतों पर अपने चरण रखकर खड़े हो जाओ। देवता इसे देख खुश होंगे।"

तत्काल ही हनुमान ने सूर्य की प्रदक्षिणा करके प्रणाम किया। अपने शरीर को नक्षत्रों से भी ऊपरी भाग तक बढ़ाया, चारों दिशाओं में शरीर का विस्तार करके समस्त ब्रह्माण्ड में फैल गया। इस अवतार को देख स्वयं ब्रह्मा भी चकित

रह गये। देवताओं ने हनुमान को देख प्रणाम किया।

सूर्य भी उस अद्भुत पर आनंदित हो हनुमान से बोला–"बेटा, तुम साक्षात् रुद्र के अवतार हो! तुम मुझे यश दिलाने के लिए मेरे यहाँ आये हो! मैं तुम्हें क्या उपदेश दे सकता हूँ?"

हनुमान ने विनयपूर्वक उत्तर दिया–"महात्मा! आपके मुँह से ऐसी बातें शोभा नहीं देतीं। आप तो वेदों के मूल कारण हैं! आप कृपया मुझको अपना शिष्य बनाकर वेदत्रय की शिक्षा दीजिए!" इन शब्दों के साथ हनुमान ने अपना वास्तविक रूप धारण किया और सूर्य के रथ के आगे खड़ा हो गया।

विरज के देहांत के बाद वाली वानर राज्य का राजा बना तो सुग्रीव युवराजा बना।

वाली के बल व पराक्रम असाधारण थे। उसके साथ युद्ध करके कोई विजयी नहीं हो सकता था। समस्त राजाओं को पराजित करने के मद में आकर रावण ने एक बार वाली के यहाँ आकर उसको युद्ध के लिए ललकारा। वाली ने रावण के साथ युद्ध करके उसको खूब सताया। तब से रावण वाली के साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार करने लगा।

इसके कुछ दिन बाद दुंदुभि नामक एक राक्षस ने वाली को युद्ध के लिए ललकारा। पहले उसने उन्मत्त हो हिमवान को युद्ध के लिए ललकारा। हिमवान ने दुंदुभि को समझाया–"भाई! तुम्हारे साथ युद्ध करने की शक्ति मैं नहीं रखता। तुम्हारे साथ युद्ध कर सकने की शक्ति रखनेवाला यदि कोई हो तो वह वाली है। तुम मधुवन में जाकर उनको युद्ध के लिए बुलाओ। वे ज़रूर मान लेंगे।"

सूर्य एक घड़ी में नौ लाख सत्तर हज़ार योजनों की गति से भ्रमण करता है। उसी वेग के साथ हनुमान उड़ते हुए स्मृति, पुराण इत्यादि समस्त विद्याएँ सीखता रहा। वह संगीत में प्रवीण बना और समस्त विद्याओं में भी पारंगत हुआ।

अपनी शिक्षा के समाप्त होते ही हनुमान ने सूर्य को प्रणाम किया। उनसे विदा लेकर किष्किधा में चला गया और वहाँ पर सारा वृत्तांत सुनाया। सुग्रीव हनुमान की शिक्षा से बहुत प्रभावित हुआ और उसको अपने ही यहाँ रख लिया।

वाली तथा सुग्रीव के बीच असाधारण स्नेह था। उनका पालित पिता ऋक्ष

इस पर दुंदुभि ने मधुवन में पहुँच कर उसका विनाश करते वाली को युद्ध के लिए पुकारा। मधुवन किष्किधा के बाहर है। वाली दुंदुभि की पुकार सुन बाहर आया। युद्ध में दुंदुभि का वध करके उसकी लाश को दूर फेंक दिया। दुंदुभि की
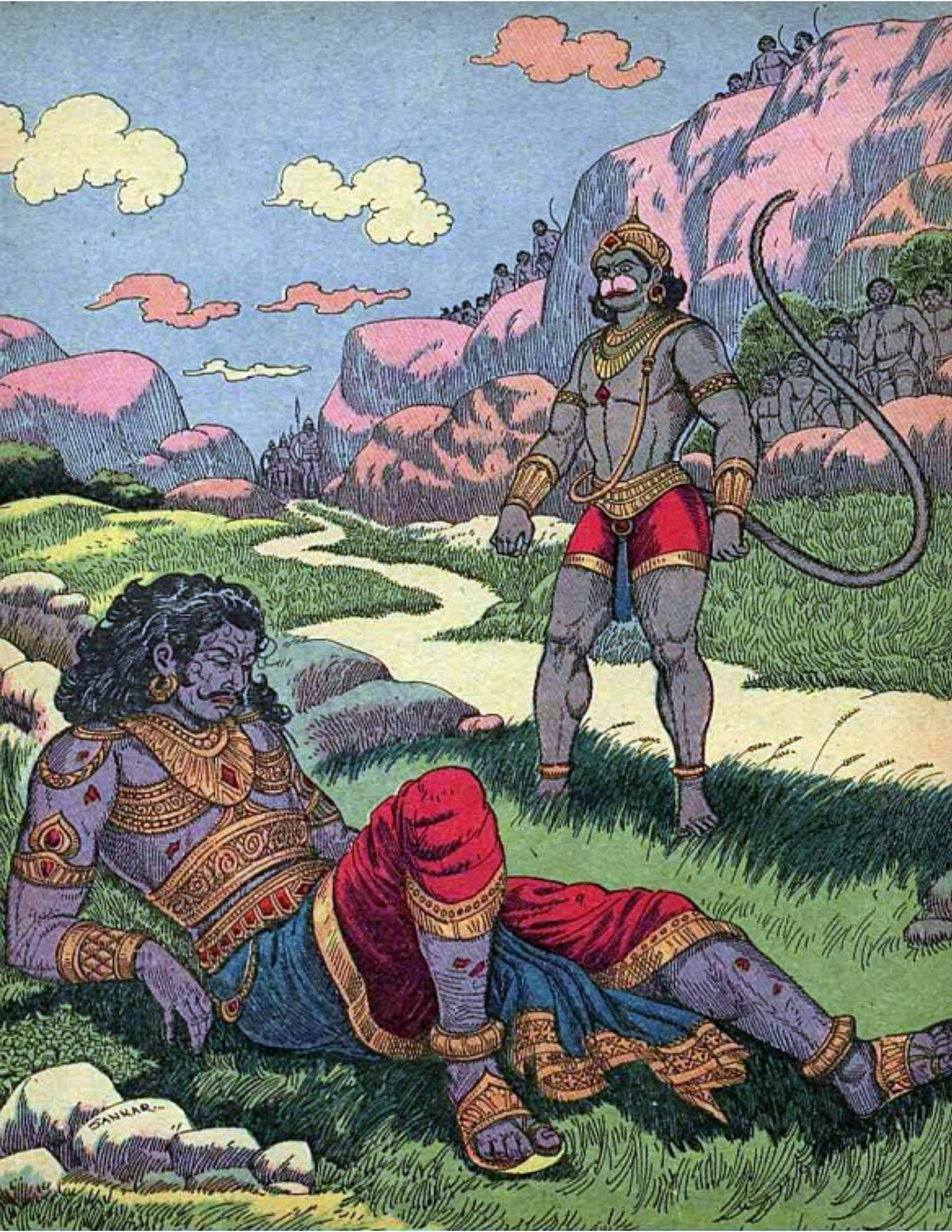
लाश दूर पर स्थित ऋष्यमूक पर्वत पर जा गिरी। उसका खून उस पर्वत पर तपस्या करने वाले महामुनि मतंग पर जा गिरा। इस पर उस मुनि ने क्रोध में आकर शाप दिया कि यदि वाली ऋष्यमूक पर जाएगा तो उसका सिर फूट जाएगा।

इसके बाद दुंदुभि के पुत्र मायावी के साथ वाली का वैर हो गया। दुंदुभि को वाली ने मारा था, साथ ही एक नारी को लेकर भी मायावी तथा वाली के बीच वैरभाव पैदा हो गया था।

एक दिन अर्द्ध रात्रि के समय मायावी ने किष्किंधा के नगर द्वार तक पहुँच कर वाली को युद्ध के लिए ललकारा। सोनेवाला वाली जाग पड़ा, शत्रु की ललकार सुन उसके साथ युद्ध के लिए तैयार हो गया। इस पर सुग्रीव तथा वाली की पत्नी तारा ने भी उसको युद्ध में जाने से रोका। मगर वाली ने न माना।

वाली को न रोक सकने की हालत में सुग्रीव भी उसके पीछे चल पड़ा। दोनों भाइयों को एक साथ आते देख मायावी डर गया और भागने लगा। वाली तथा सुग्रीव उसका पीछा करने लगे। मायावी उन दोनों को बहुत दूर ले गया और आखिर कांटों से ढंके एक पहाड़ी सुरंग में घुस गया।

"मायावी का वध करके मेरे लौटने तक तुम यहीं रहो।" यह बात सुग्रीव से कहकर वाली भी सुरंग में घुस पड़ा।

बड़ी देर तक वाली बाहर न आया, तब सुग्रीव को डर लगा कि शायद वाली मर गया है। इतने में सुरंग में से फेन से भरा खून बाहर आया। सुरंग से बाहर सुनाई देनेवाली ध्वनि राक्षस की सी प्रतीत हुई।

इस पर सुग्रीव ने अपने भाई के वास्ते शोक प्रकट किया। उस सुरंग को एक पहाड़ी शिला से ढक दिया, अपने भाई के वास्ते जल तर्पण कर किष्किंधा को लौट आया। वानरों ने सुग्रीव का राजा के रूप में अभिषेक किया।
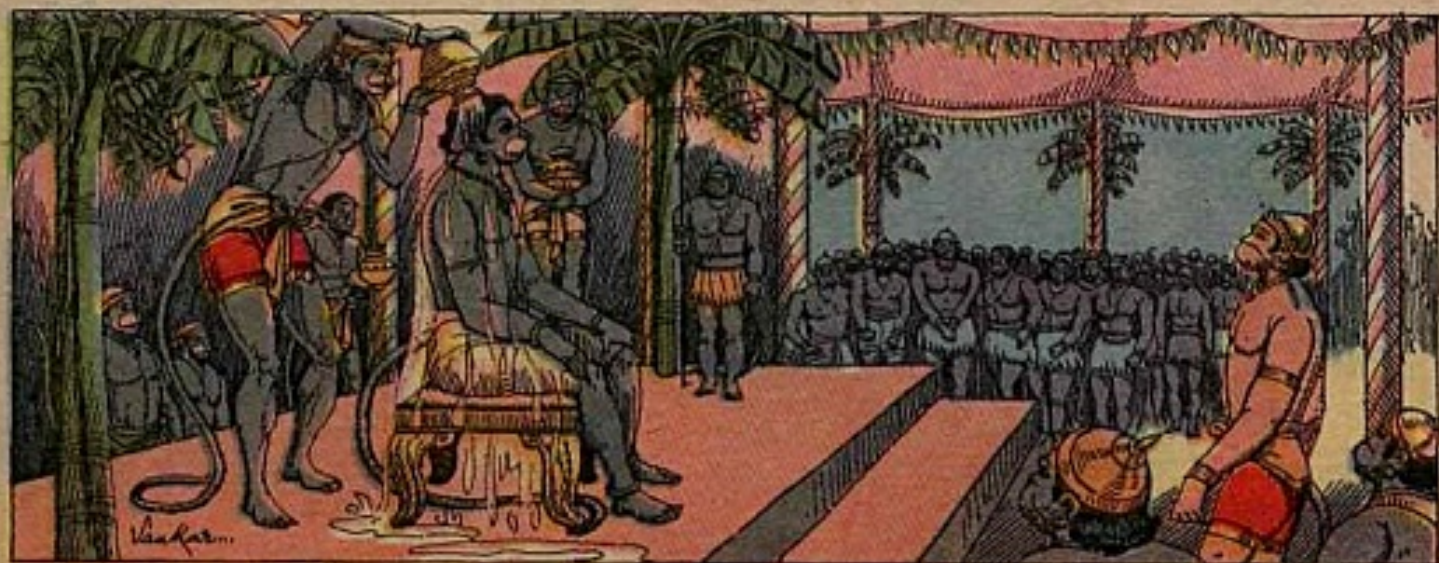
रजतम् वा, सुवर्णम् वा
वस्त्राण्याभरणानि च,
अविभक्तानि साधूना
मवगच्छन्ति साधवः ॥ १ ॥

[मित्र दूसरों के सोना, चांदी, वस्त्र तथा आभूषणों में अंतर नहीं मानते ।]

आढ्यो वापि, दरिद्रो वा,
दुःखित, स्सुखितोपि वा,
निर्दोषो वा, सदोषो वा,
वयस्यः परमागतिः ॥ २ ॥

[धनी हो या दरिद्र, दुःखी ओ या सुखी, दोषी या निर्दोषी, मित्र ही एक मात्र सहारा है ।]

धनत्याग, स्सुखत्यागो,
देहत्यागोपि वा पुनः,
वयस्यार्थे प्रवर्तंते
स्नेहम् दृष्ट्वा तथाविधम् ॥ ३ ॥

[स्नेह के आधार पर धन, सुख तथा यहाँ तक कि देह का भी त्याग करते हैं ।]

मित्रता – वाल्मीकि

Photo by B. Bhansali
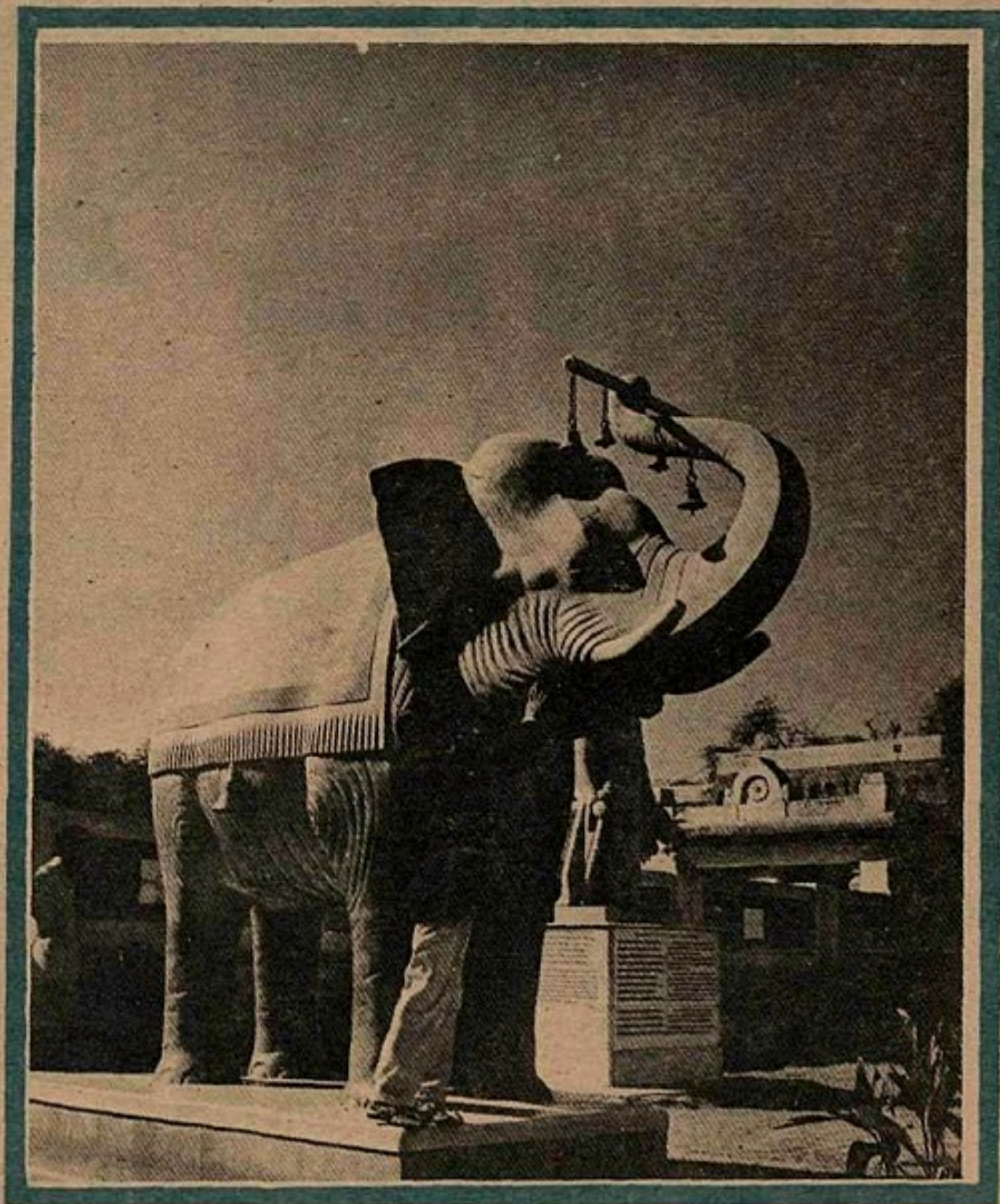
पुरस्कृत परिचयोक्ति

राज द्वार की शान हाथी

प्रेषक :
जय किशन अग्रवाल

Photo by T. Madangopal
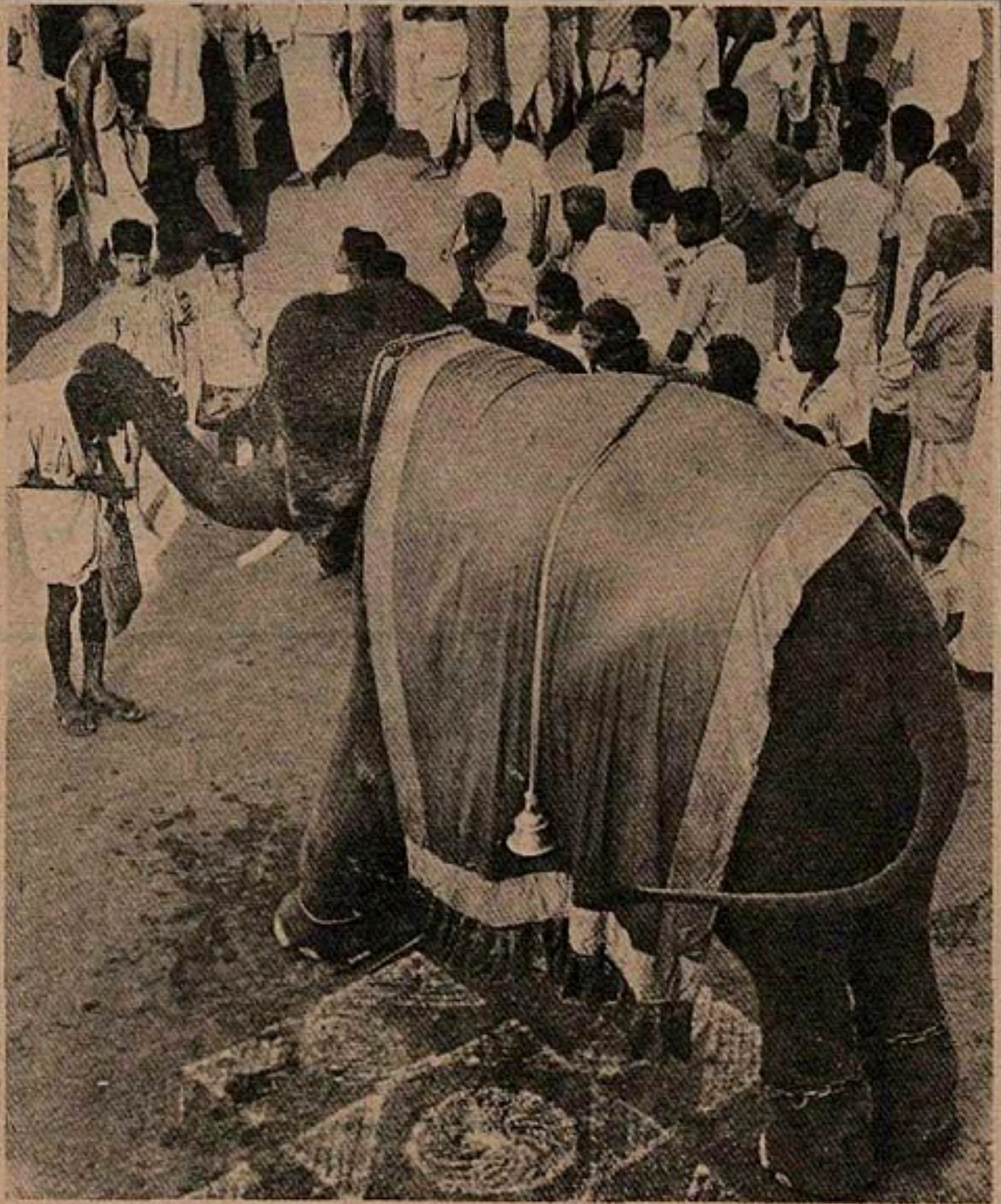
अग्रवाल ब्रदर्स. के-ई-एम रोड,
बीकानेर (राजस्थान)

बन गया जन साधारण का साथी

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★ परिचयोक्तियाँ दिसम्बर १० तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।
★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ फरवरी के अंक में प्रकाशित की जायंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-600026. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

Photo by: **K. K. RAO**

RIDE A CYCLE

CHANDAMAMA (Hindi) DECEMBER 1974 Regd. No. M. 5452

मित्र-भेद